आओ चलें

पंकज सूदन

BlueRose ONE.com
Stories Matter
NewDelhi • London

BLUEROSE PUBLISHERS
India | U.K.

Copyright © Pankaj Sudan 2026

All rights reserved by author. No part of this publication may be reproduced, stored in a retrieval system or transmitted in any form or by any means, electronic, mechanical, photocopying, recording or otherwise, without the prior permission of the author. Although every precaution has been taken to verify the accuracy of the information contained herein, the publisher assumes no responsibility for any errors or omissions. No liability is assumed for damages that may result from the use of information contained within.

BlueRose Publishers takes no responsibility for any damages, losses, or liabilities that may arise from the use or misuse of the information, products, or services provided in this publication.

For permissions requests or inquiries regarding this publication,
please contact:

BLUEROSE PUBLISHERS
www.BlueRoseONE.com
info@bluerosepublishers.com
+91 8882 898 898
+4407342408967

ISBN: 978-93-7825-811-4

Typesetting: Sagar

First Edition: July 2026

आहाना रेयान और सान्वी को समर्पित

आभारोक्ति

इस पुस्तक के वर्तमान रूप में प्रस्तुति और उत्तम प्रकाशन के लिए मैं ब्लू रोज पब्लिशर्स की तकनीकी और प्रबंधन टीम का आभारी हूँ। इस पुस्तक के कवर डिज़ाइन और अन्य पहलुओं के निर्धारण में मेरे बेटे रजत सूदन की भागीदारी भी काफी अहम रही।

इस को लिखते समय अचानक उद्भूत हुई कई अंतर्दृष्टियों और ब्रह्माण्ड में कार्यरत अदृश्य शक्तियों के समुचित मार्गदर्शन के बिना यह पुस्तक कभी न लिखी जाती, इसका मुझे अहसास है। अस्तु उन सभी उत्प्रेरकों का भी धन्यवाद जिन्होंने प्रकट और अप्रकट रूप से मुझे इसे इस वर्तमान रूप में - दर्शन और हास्य, गद्य और पद्य के अभूतपूर्व मिश्रण की इस साहित्यिक डिश को बनाने की प्रेरणा दी।

प्रस्तावना

आज के युग में साहित्य का वह स्थान नहीं रहा जो सूचना क्रांति के दौर से पहले था। अब तो साहित्य की अपेक्षा केवल सूचनाओं से ही हमारी ज़रूरतें पूरी हो जाती हैं। सुबह उठते ही, चाय की चुस्की के साथ, न्यूज़ और सोशल मीडिया के विभिन्न प्लेटफॉर्म्स पर प्रसारित तरह तरह की घटनाओं और उनकी सूचनाओं से ही दिन की शुरुआत होती है। सूचनाएँ चमकती हुई बिजलियों या फूलझड़ियों की तरह ही होती हैं जो आपको दीर्घकालीन प्रकाश नहीं प्रदान कर सकतीं। यह तो वैसा ही है जैसे किसी प्यासे की प्यास शबनम के कतरों से बुझाने की कोशिश की जाए। सच्ची तृप्ति तो अर्थपूर्ण और गहरे साहित्य से ही संभव है।

मैंने इस पुस्तक को न तो गद्य और न ही पद्य रूप में लिखा है। मैंने इसे उस अंदाज़ में लिखा है जिस विधा में आजकल कोई रचना बड़ी ही मुश्किल से ही मिल पाती है।और वह है - गद्य और पद्य का मिश्रण, जिसे प्राचीन काल में चम्पू साहित्य कहा जाता था। पहला ज्ञात चम्पू काव्य त्रिविक्रम भट्ट द्वारा लिखित नलचम्पू को माना जाता है। इसमें मैंने एक प्रयोग और किया है। इस गद्य काव्य (चम्पू) को मैंने भारतीय वाङ्मय और दर्शन के प्रमुख व्यवहारिक बिंदुओं और शुद्ध हास्य रस का समागम करते हुए प्रस्तुत किया है।

यह इसलिए कि दर्शन और वैदिक साहित्य के सार - स्वरुप चरैवेति चरैवेति को ही मैंने हिंदी में "आओ चलें" के शीर्षक और पुस्तक की मुख्य विचारबिंदु के रूप में रखते हुए, सभी समस्याओं के रामबाण के रूप में निरुपित किया है जो आज की फ़ास्ट लाइफ जीने वाले और समयाभाव को महसूस करने वाले युवा वर्ग को क्लिष्ट लग सकता था। इसीलिए लेखन को पूरी तरह फन्नी बनाने का प्रयास किया है। इस प्रयास में कविताओं को पूरी तरह असंपादित और काव्य शास्त्र नियमों से मुक्त रखा गया है ताकि यह उसी समय स्फूर्त हुईं और प्राकृतिक लगें।

इंग्लिश के हिंदी में होने वाले रोजमर्रा के शब्दों को, जो अब हिंगलिश रूप से प्रचलित हैं ,इसमें मुक्त रूप से प्रयोग किया गया है ताकि आम जनमानस इसे आसानी से पचा सकें, समझ सकें। संस्कृतनिष्ठ शब्दों का प्रयोग कम से कम किया गया है। दरअसल इस पुस्तक का मंतव्य तो अधिक से अधिक पाठकों तक पहुंचना ही है न कि साहित्य - मर्मज्ञों और साहित्य -पंडितों से वाहवाही लूटना। अस्तु,आशा है कि समालोचक बंधु, कृपा -सिंधु बन के, इस बिंदु पर, कृपा - दृष्टि रखेंगें।

तो, आओ चलें।

–पंकज सूदन

आओ चलें

दबी हो कमर जब बोझ तले
हृदय चुनौतियों से हों दलें

रुके हों विचारों के काफ़िले
और मन का रथ चलाये न चले

तो अपना के मस्ताना अंदाज़
सुन अंतरात्मा की आवाज़

छोड़ पीछे तंग अलफ़ाज़
छेड़ें दिल के नाज़ुक साज़

आओ चलें,आओ चलें
आओ चलें ,आओ चलें।

“हवा जब चलती हो सर्र सर्र, मंदिरों के ध्वज फहर रहे हों फर्र फर्र, पर्वतीय झरनों से जल बहता हो झर - झर, वहां जोगी आता है । जहाँ कोई चीज़ रुकी नहीं , जहाँ कोई नज़र झुकी नहीं , वहां मनमौजी आता है ,वहाँ जोगी आता है। वो सिर्फ एक गीत गाता है - आओ चलें, आओ चलें।

जब कहीं अटके हो , जब कहीं भटके हो ,मझधार में लटके हो ,तब एक ही यंत्र है , तब एक ही मन्त्र है - आओ चलें, आओ चलें। सब दिशाओं में एक ही गीत गूंज रहा है - आओ चलें, आओ चलें। वह रमता जोगी है ,वह बहता पानी है।

उसका शरीर है, पर वस्तुत: वहां सिर्फ एक सतत प्रवाह है ,ठीक वैसे ही जैसे एक दर्पण के सामने आती हुई अलग अलग वस्तुओं का प्रवाह उसमें दिखता है, पर दर्पण के भीतर उसका अपना कुछ नहीं होता। उसका सपना कुछ नहीं होता। सिर्फ बाह्य वस्तुओं और घटनाओं को वह दिखला देता है। उसका अपना कोई मत या पसंद - नापसंद नहीं होती। रमता जोगी सदा एक आत्म - शून्य प्रवाह, एक दर्पण मात्र ही होता है।

यह रमता जोगी कौन है ? यह जोगी कहाँ है ? तो सुनो , वह है वहाँ - हर उस जगह, जहाँ निर्बाध बहाव है ,जहाँ निर्द्वन्द्ध चैतन्य प्रवाह है। वह वहां नहीं जहाँ “मैं” की मनमर्ज़ी है , जहाँ “मैं” की कोई अनाधिकृत सलाह है , जहाँ बेकाबू भावनाओं की कोई चोटिल आह है। यह तो केवल वहीं है, जहाँ अतीत द्वारा स्फुरित, सभी तानाशाही नियंत्रण, स्वाह हैं।”

अनुक्रमणिका

रमता जोगी 1
देवी की मूर्ति 5
नज़र 8
ठंडी लस्सी 12
रीस की टीस 15
स्पीड 18
आध्यात्मिकता 21
बेकार 25
आलू की टिक्की 29
समोसा 32
ज़ोम्बी जगत 35
मूर्ख - चतुर 37
संवेदना और अनुशासन 42
हरा तोता 47
कबूतर 50
बर्फीली चोटी 54
अंत का डर 59
क्लब पार्टी 63
बाज़ीगर 69
नूडल्स 73
पहाड़ी सुरंग 78
गोल गप्पे 81

टायर पंक्चर 86
देशी घी 90
जल्दबाज़ी 95
बहता पानी 98
शिकंजी 102
जलेबी गर्मागर्म 106
उपसंहार 111

रमता जोगी

चिपकु लाल ने गली के कोने से आते एक जोगी को देखा। दमकता चेहरा ! बदन छरहरा ! तेज़ हवाओं में लहराता चोगा। ज़रूर यह कोई सिद्ध होगा।

चिपकु ने जोगी से पुछा, "जोगी जी बताओ जोग क्या है ? जिस पर दिया न, इस जग ने ज्यादा ध्यान, दुनिया में ऐसा रोग क्या है ?"

जोगी ने कहा, "सबसे बड़ा रोग ओ चिपकु ! अपने बनाये अधपके और उथले सिद्धांतों के खूँटों से लटकना, कर के प्रवाह की उपेक्षा किसी पूर्वाग्रह रुपी पत्थर से अटकना, व्यर्थ कृत्यों में बस यूँ ही भटकना और जिसे करना था नज़रअंदाज़, उसी को है सटकना।

मैं सदा बहता हूँ ,बस बहते रहता हूँ। यही मेरा नाम है। यही है मेरी कहानी। मैं हूँ रमता जोगी जैसे बहता पानी।"

चिपकु लाल ने हाथ जोड़ते हुए कहा, " जोगी जी, आपको देख के मुझे यह होने लगा है विश्वास कि सही मार्गदर्शक की, अब मेरी पूरी हो चुकी है तलाश। अब मैं न इधर जाऊंगा, न उधर जाऊंगा। कुछ दिन मुझे अपने साथ रहने दो। मैं रुकी नाव हूँ, तर जाऊंगा। अब यह सवाल, अब यह बवाल, मेरे लिए हो गया है जीने मरने का। मना न करना। आपने ठुकराया तो मैं मर जाऊंगा।"

रमता जोगी ने उसे करुणा से देखा और मौन स्वीकृति देते हुए सर हिलाया और फिर उसे अपने निकट बुलाया और हँसते हुए फ़रमाया, "सुनो अब ज़रा मस्ती गीत गाएं। इस जग की वही सबसे बड़ी व्याधि वही तो है जो तुम्हारा नाम है, जो तुम्हारी उपाधि है। चिपकु होना। यानी मोह। यानी प्रवाह में कमी। अटकना अपने सिद्धांतों पर। विचारों पर अड़ जाना और फिर दूसरे से लड़ जाना। मोह की रुकावट का बस एक ही इलाज़ है - वही जो रुंधे हुए, सकपकाए हुए गले का इलाज़ है।

आओ चलें,आओ चलें
आओ चलें, आओ चलें

गला बंद है तो गाओ चलें
मोहग्रस्त हैं तो आओ चलें

चलना ही तमस की दवा है
जिंदा वो ही है, जो रवां है

आओ चलें,आओ चलें
आओ चलें ,आओ चलें।"

फिर रमता जोगी ने चिपकु को देखते हुए यह गंभीर वाणी में कहना शुरू किया, "मोह किसी व्यक्ति या वस्तु से ही नहीं होता, जबकि हम ऐसा ही सोचते आये हैं.

दुनिया के लगभग सारे ग्रन्थ प्रेम गीतों से भरे हैं, कला और शिल्प में भी प्रेम के दो पहलुओं – मिलन और विछोह को ही अधिकतर दर्शाया गया है।ऐसे किस्से, ऐसी कहानियां, ऐसे महाकाव्य, बहुतेरे हैं। यह मानव का परस्पर मोह ही है, जिसे उन्होंने प्रेम बताया है। कन्फ्यूजन के बादल घनेरे हैं। हाँ कभी कभी उन्होंने वहां वस्तुओं, उपलब्धियों और सत्ताओं से होने वाले मोह भी उकेरे हैं।

लेकिन हमारे जीवन का पारिवारिक ,व्यावसायिक और सामजिक क्षेत्र तो किसी और ही मोह के फलस्वरुप दुःखी हुआ रहता है वह है खुद ही से मोह - खुद के विचारों, रुचियों, मान्यताओं या सिद्धांतों से मोह।

सारा विश्व इसी के कारण व्यथित है। इसी के फलस्वरूप सारी मानसिक दुर्बलताएँ हैं - जैसे क्रोध, ईर्ष्या,अपमान,द्वेष और दूसरे को नीचा दिखाने की प्रवृत्ति है।

तो बाहरी मोह - अर्थात किसी व्यक्ति या वस्तु से मोह, इतना व्यापक नहीं जितना आंतरिक मोह - अर्थात मन के भीतर की संग्रहित वृत्तियों या प्रवृत्तियों से मोह।"

चिपकू ने कहा , "प्रभु, हम तो ठहरे वो निपट मूढ़। समझ न आएं जिसे ऐसी बातें गूढ़। हमें तो बस इतना ही पल्ले पड़ा है कि सभी मर्ज़ों की एक ही दवा है और वह है - जो आपने ही कहा है - आओ चलें, आओ चलें।

देखो न कैसी फर्र फर्र हवा बह रही है ? न जाने वो हम से क्या कह रही है ? हमें तो यही सुनाई पड़ता है कि वो कह रही है - आओ चलें। क्योंकि हवा यदि बहे ही न तो फिर वह हवा ही कहाँ रही ? उसका बहाव ही उसकी ज़िन्दगी है, वही उसका वजूद है,वही उसकी हस्ती है, यह बहाव ही तो उसकी मस्ती है।"

उसकी ये बातें सुन के रमता जोगी बहुत प्रसन्न हुआ।

उसने गुनगुनाना शुरू कर दिया।

"सड़क पे कूड़ा है पड़ा
पड़े पड़े वह वहीं सड़ा
तो हवा क्या कहती है ?"

चिपकू तुरंत बोला, "*आओ चलें।*"

जोगी - "*असफल प्रयासों से हताश*
या हो नियति से कोई निराश
तो बोध क्या कहता है ?"

चिपकू - "*आओ चलें।* "

जोगी - "*कोई हो निज मत पर अड़ा*

रुख कर चुका हो अपना कड़ा
उससे ही दुश्मन की तरह लड़ा
जिससे था सबसे ज्यादा प्यार
अब क्या करें इसका उपचार ?"

चिपकु - *"आओ चलें।"*

फिर अपने हाथों को पीछे से आगे की ओर चलाते हुए
और आगे से पीछे की ओर झुलाते हुए,
यह गीत गाते हुए,
गली के छोर से बाहर हो गए दोनों,
मुस्कुराते हुए -

"आओ चलें ,आओ चलें , आओ चलें।"

देवी की मूर्ति

एक बहुत ऊँचे पर्वत पर एक नामी मंदिर था। जिसमें रखी एक देवी की मूर्ति की बहुत मान्यता थी। इसी कारण दूर दूर से भारी संख्या में श्रद्धालु वहां आते थे। रमता जोगी और चिपकु लाल उसी मंदिर के प्रांगण में मंदिर की सीढ़ियों पर बैठे हुए दूर पर्वतों को देख रहे थे। उनसे कुछ दूरी पर एक छोटी सी झील थी जिसके अंदर एक गोल द्वीप जैसा जमीन का टुकड़ा था जिस पर घास उगी हुई थी। लोग कहते हैं कि वह द्वीप झील में धीरे धीरे घूमता रहता था और स्थिर न था।

एक दर्शनार्थी वहां आया और उसने अपना बैकपैक नीचे रख दिया। वह भी सीढ़ियों पर बैठ गया ताकि इस पर्वतीय चढ़ाई के कारण हो चुकी थकावट को वह सुस्ता के दूर कर सके।

उसको थोड़ा उदास देख के चिपकु लाल ने उससे पूछा, " लोग तो यात्रा कर के खुश होते हैं पर तुम उदास हो। ऐसा क्यों ?"

वह यात्री बोला, "यहाँ मंदिर में स्थित देवी को, पुजारी लोग एक परम्परा के अनुपालन के लिए, अभी नीचे कुल्लू ले गए हैं। मेरा तो यहाँ आना व्यर्थ हो गया न ? अब वापिस जाना होगा खाली हाथ।"

रमता जोगी ने मुस्कुरा के उससे कहा, "खाली हाथ ? बिलकुल नहीं। तुमने रास्ते में इतने शानदार नज़ारे देखें हैं, ट्रैकिंग की है, फ्रेश हवा को - जिसमें चीड़ के पेड़ों से निकलने वाली गंध मिली है - उसे सूंघा है। रातों को आकाश में शायद पहली बार इतने तारे देखे हैं।

एक नयी अनुभूति हुई है जो प्रत्येक यात्रा में रूटीन से बाहर निकलने के फलस्वरुप होती ही है। पर्वतीय झरनों से बहता मिनरल वाटर पिया है तुमने - बिल्कुल फ्रेश और स्वास्थ्यवर्धक, जैसा तुम्हारे मैदानी शहरों में मिलने वाली मिनरल वाटर की बोतलों में किसी हालत में नहीं मिलेगा। बिना किसी बदहवास भागमभाग के और ज़िम्मेदारियों की बेड़ियों से मुक्त हर एक लम्हा जिया है तुमने।

और तुम कह रहे हो खाली हाथ ? वह देखो। झील में का वंडरफुल दृश्य ! घूमता हुआ द्वीप ! है न कितना अद्भुत ? यह पहले तुमने कहाँ देखा था ? तुम दुःखी हो कि देवी के दर्शन नहीं कर पाए। तो फिर यह सब क्या है ? यही तो देवी के जीवित,जागृत दर्शन हैं। क्षुद्र सोच से अनंतत्व की ओर संकर्षण है।

देवी को उस पाषाण प्रतिमा में ही माने बैठना तो दरअसल उस देवी को सीमित करने जैसा है, जो सूक्ष्म स्तरों पर उस देवी का घोर अपमान है। यह तुम अभी नहीं समझोगे क्योंकि तुमने देवी दर्शन को केवल एक लक्ष्य बना दिया है अपने ऑफिस में मिलते उन मासिक टार्गेट्स की तरह जिन्हें तुम्हें बस किसी तरह पूरा करना होता है। सभी बॉक्सेस टिक हो गए। लक्ष्य पूरा हुआ। सब हो गया सेट। चलो अब लिया जाए अगला टारगेट।

धार्मिक यात्रायें ऐसे माइंड सेट से नहीं की जा सकतीं। इन यात्राओं में हम भलीभांति जानते हैं कि मूर्ति तो किसी अनंत अव्यक्त का ही प्रतिरूप या प्रतीक है। यदि यह जान कर धार्मिक यात्रा करोगे तभी तुम्हें उस यात्रा को सफल मानना चाहिए। सिर्फ भागते हुए गए और जल्दबाज़ी से दर्शन किये और भागते भागते घर लौट आये। यह तो सरासर निरर्थक प्रयास है, समय और परिश्रम का ह्रास है।

जाओ, उस द्वीप को निहारो। अपने एकाग्र और शांत मन के कैमरे से इस मनोहर दृश्यावली की तस्वीर खींचो। और सामने जो पहाड़ है उस पर ट्रैक करो। लम्बी सांसें खींचो। जीवनदायिनी देवी प्राण ऊर्जा बन के तुम्हारे अंदर प्रवेश कर जायेगी। उस ऊर्जा से अपना रोम रोम सींचो। देवी अब तुमसे अभिन्न है क्योंकि वह जीवन शक्ति रूप से तुम में प्रवेश कर के तुम्हारे अंगों के परमाणुओं में नृत्य कर रही है और तुम्हारे लहू में प्रवाहित होगी। मंदिरों की यात्रा कुछ तुच्छ मांगें, मांगने के लिए नहीं, बल्कि इस प्रकार अपनी शक्ति को बढ़ाने के उद्देश्य से होनी चाहिए।”

रमता जोगी और चिपकु लाल इसी के साथ उठ खड़े हुए और यह गीत गाते हुए उस मंदिर से नीचे उतर कर पर्वतीय ढलानों के, मखमली हरी घास के मैदानों पर, चलते हुए दूर और दूर होते हुए ,आँखों से ओझल हो गए –

आओ चलें ,आओ चलें
रुकी है जो किश्ती उसे चलाओ, चलें।

तुम्हें मिलती शांति लक्ष्य पूर्ति से
तुम्हें मिलती शांति देव मूर्ति से।

शांति को ही लक्ष्य बनाओ ,चलें
आओ चलें ,आओ चलें

इसीलिए तो मूर्तियां तेरी बनायीं हैं महंत ने
नयन हैं असमर्थ तेरे दीदार को दिगंत में

तेरे प्रतीकों और प्रतिरूपों से हमें क्या लेना
लगा दी है जब डुबकी तुझ सागर अनंत में ?

सीमित को असीम तक फैलाओ, चलें
आओ चलें ,आओ चलें।

नज़र

रमता जोगी और चिपकु लाल अब एक दूसरी पहाड़ी पर आ पहुंचे थे। एक लम्बा ट्रैक किया था उन्होंने। फिर आगे पर्वत शिखर तक सीधी चढ़ाई थी। ट्रैक के दोनों और गहरी खाई थी। नीचे सड़क पर रेंगती कारें और बसें ऐसी लग रहीं थीं जैसे छोटे छोटे खिलौने।

पर्वत शिखर से दूर नीचे घाटियों तक फैला,नाजुक रेशमी फ़ायों जैसा,सफ़ेद बादलों का, एक अंतहीन समंदर था। इस पहाड़ की चोटी पर भी एक मंदिर था। जो अक्सर ही होते हैं। उस पर एक भगवा ध्वज फहरा रहा था। मंदिर के चारों ओर पहाड़ी ढलानें थीं, जिन पर हरी घास की मखमली चादर बिछी हुई थी। गायों का एक झुण्ड वहां घास चरने में मशगूल था। कुछ गिद्ध आकाश में एक बड़े गोलाकार घेरे में बिना पंख हिलाये उड़ रहे थे। सफ़ेद बादल नीले आकाश में, नीले जल में सफ़ेद नौकाओं की तरह हौले हौले तैर रहे थे। सूरज की कुछ सुनहरी किरणें इन बादलों की परतों में बन गए एक छेद से बीम के रूप में मंदिर के गुम्बद पर पड़ रहीं थीं।

मंदिर में पुजारी की नज़र इनमें से किसी पर न थी। वह तो बस दूर नीचे घाटी की ओर रह रह के देख रहा था कि शायद आज कोई भक्त या टूरिस्ट आ जाएँ। यह एक निर्जन और सुदूर पर्वतीय क्षेत्र था इसलिए यहाँ तक कम लोग ही आ पाते थे।

मंदिर से कुछ मीटर नीचे ढलान पर एक काली चट्टान थी। घास से ऊपर निकली हुई। इस पर रमता जोगी और चिपकु लाल बैठे थे। दोनों के हाथों में कागज़ के लिफाफे थे जिनमें से भुने हुए चने निकाल के दोनों तन्मयता से खा रहे थे। बस खाने की प्रक्रिया ज़ारी थी। दोनों के मन में न तो कोई विचार था और न कोई चिंता। भोजन था पर भोक्ता नहीं था वहां। बात सरल है पर इसका गहरा मर्म था। कोई कर्त्ता न था वहां, सिर्फ कर्म था।

जहाँ कर्त्ता न हो वहां सीमाएं असीम हो जाती हैं और ठोस आकृतियां बहने लगती हैं। वे बहती हैं, इस संसार में नहीं, बल्कि उन आकृतियों के सूक्ष्तम स्तरों पर। वहां, जहाँ सिर्फ

ऊर्जाओं के कम्पन हैं, जहाँ चेतना के स्पंदन हैं। चने,उनके खाने वाले और भोजन की प्रक्रिया – अब तीन भिन्न सत्ता नहीं, एक ही अभिन्न – अद्वैत अवस्था थीं।

कुछ देर पश्चात एक टेम्पो ट्रैवलर मंदिर से कुछ दूरी पर आ के रुका। उसमें से भक्तों का एक हुजूम उतरने लगा। बहुत से भक्तों को देख के पुजारी भी सक्रिय हुआ और उन लोगों के लिए मूर्ति के दर्शन की व्यवस्था करने लगा। मालाएं, प्रसाद और पूजा का अन्य सामान मंदिर के भीतरी भाग में रखे गए बक्से से निकाला गया। अभिमंत्रित जल सब दर्शनार्थियों पर उछाला गया।

सभी लोग पूजा में लग गए। बेशक़ मूर्ति अत्यंत सुन्दर थी और ऐसा लग रहा था कि अब बोली, कि अब बोली। लेकिन बाहर जहाँ हरी घासों के लहलहाते मैदान थे , काली चट्टान थी ,सफ़ेद गायों के झुण्ड थे जिनके गले में बंधी घंटियों से मधुर टनटनाहट नीचे घाटियों तक गूँज रही थी, जहाँ विशाल गिद्ध थे ऊपर नीले आकाश में, जहाँ से कुछ बादलों के रेले अब मंदिर द्वार तक पहुँच रहे थे, वहां तो मूर्ति बोल रही थी। मंदिर के भीतर की मूर्ति भावपूर्ण थी पर शांत थी लेकिन यहाँ वाली तो वह बोल रही थी। वह कण कण में स्पंदित थी। वह प्रत्येक भाव में, ऊर्जा के प्रवाह में कम्पित थी।

लेकिन उसको बोलते कोई नहीं देख पा रहा था,उसके हौले से – चुपके से बोले गए वचन कोई नहीं सुन पा रहा था। कोई उसे देख नहीं रहा था, शायद देखना भी नहीं चाह रहा था, क्योंकि सबको तो उसका पता ठिकाना मंदिर ही बताया गया है न सदियों से?

पर्वत शिखर से नीचे की ओर तेज़ हवाएं बह रहीं थीं। फर्र फर्र। ढलानों पर उगी घास और पेड़ों की पत्तियां झूम रहीं थीं। मानो, हवाओं के गीतों को सुन के पूरी प्रकृति झूम रही हो, नृत्य कर रही हो। अगर कोई ज्ञानी हो,अगर कोई ध्यानी हो, अगर किसी ने हवाओं की भाषा डिकोड करनी सीखी हो, जानी हो तो उसे यह सुनाई पड़ेगा –

खोये रहते हों जो
अपने ही मानसिक चित्रों में
वे तुझे देख पाएंगे कहाँ ?

सुनते रहते हों जो धुन
अपने ही बनाये गीतों की
धुन वो तेरी सुन पाएंगे कहाँ ?

रमता जोगी ने सुना गाती हवा को, देखा नाचती प्रकृति को, सूँघा चीड़ के पेड़ों की गंध को जो हवाओं में मचल रही थी। उसने अनुभूत किया अपने हृदय को, जहाँ मौन - तरंगें समय के परदे से कम्पित हो के समयातीत आयामों के प्रवेशद्धारों तक उछल रहीं थीं. रमता जोगी से अब और अधिक वहां बैठे रहा न गया। उसने चट्टान से नीचे मखमली घास की ढलान पर छलांग लगा दी। उसके पीछे पीछे चिपकु लाल भी कूद लिया। तेज़ हवाओं से उन दोनों के बाल हवा में उड़ने लगे। आकाश में सफ़ेद चमकीले बादल, जो पल भर के लिए खो से गए थे,रुके हुए थे मानो, किसी स्वप्न को देखते सो से गए थे, फिर आगे बढ़ने लगे। वायुमंडल में नाद ब्रह्म के शब्द, स्वयं को प्रकट करने लगे, दिव्य काव्यात्मकता को घड़ने लगे।

चिपकु बोला, “जो आपको नज़र आता है महाराज ,वह हमें क्यों नहीं आता ?”

रमता जोगी ने गाते हुए कहा -

"ऊपर देखो, अगर देख सको तो -
यह नीला आकाश सबके लिए है।

महसूस करो इस ताज़ातरीन हवा को,
यह दिलकश अहसास सबके लिए है।

सूँघो - पहाड़ी घासों और झरनों की महक को,
सौंधी सी यह खुशबु ख़ास सबके लिए है।

नज़र न खुलेगी जब तक हम मान्यताओं में जकड़े हैं।
कठोर सिद्धांतों में अडिग हैं, अकड़े हैं।

देखने समझने को नयी परिस्थितियां
पुरातन दृष्टिकोणों और चश्मों को कस के पकड़े हैं।

देखना है अगर उसे, जो ओझल है,गहरा है,
ब्रह्माण्ड का वजूद जिसके होने से ठहरा है

तो झूठ के पुलिंदे से सत्य को अलहदा करो
शौके दीदार है तो गहरी नज़र पैदा करो।"

ठंडी लस्सी

सड़क के किनारे एक लस्सी की दुकान थी। काफी भीड़ थी। सब प्रतीक्षा में थे कि कब उनका नंबर आएगा और इस गर्म मौसम में कुछ ठंडा, कुछ लज़ीज़ उनके भीतर जाएगा ? जिसके हाथ में लस्सी का गिलास आ गया, वह ऐसे प्रसन्न हुआ जा रहा था मानो उसने कोई पारितोषिक प्राप्त कर लिया हो ,कोई बाज़ी मार ली हो। और बाकी लोगों की नज़रें उस व्यक्ति को ऐसे देख रहीं थीं कि वाह बेटा ! मार लिया तुमने नंबर। कोई बात नहीं। अगला नंबर हमारा है।

रमता जोगी और चिपकु लाल भी भीड़ में थे। उन्हें कोई जल्दी न थी ,कोई बेताबी न थी। वे शांत नज़र से दुनिया का नज़ारा देख रहे थे। ज्यों ज्यों लस्सी बंटती जा रही थी , लोगों की कसमसाहट और बेचैनी बढ़ती जा रही थी। लाइन में लगी एक बेचैन आत्मा बोली, “अरे भाई, सबसे पहले तो मेरा टर्न था ,मैं यहाँ सबसे पहले आया था। और देखो देखो, यह बाद में आया हुआ कैसे हमें कर गया बाई पास ? क्या मज़े से लस्सी के घूँट भर रहा है ? ज़रूर यह लस्सी वाले का ही होगा कोई ख़ास।” उसके चेहरे पर ईर्ष्या का बर्न था।

रमता जोगी ने कहा , “इंसान हर चीज़ बर्दाश्त कर सकता है पर लाइन तोड़ के कोई उससे पहले आगे चला जाए, उसे ओवरटेक कर ले, यह उसे मंजूर नहीं।”

चिपकु ने पूछा, “क्यों हम रीस के बगैर नहीं रह सकते ? हम अपना काम करें बस। दूसरा क्या कर रहा है या दूसरे को क्या मिल रहा है, इससे हमें क्या लेना ? जोगी महाराज, क्या तुलना इतनी ज़रूरी है हमारी तसल्ली ,हमारी दिली सुकून के लिए ?”

रमता जोगी ने कहा , “तुलना न करना ही मौज़ का द्वार है। तुलना करना उसका निरादर है जो वर्तमान में आपको समर्पित है। तुलना प्रेम का अपमान है। यह दुनिया मौज़ करना भी नहीं जानती। मौज़ के मौकों में भी सीरियस रहती है। आओ हम अतुलनीयता की खोज करते हैं, आओ मौज़ करते हैं। सच्चा ध्यान ही सच्ची मौज़ है क्योंकि सच्ची मौज़ में ही तो हो सकती सच्ची खोज है।”

तभी लस्सी वाले की नज़र भीड़ से परे खड़े जोगी और चिपकु पर पड़ी। उसने अपने नौकर को दो ग्लास लस्सी उन्हें दे आने को बोला। जैसे ही रमता जोगी और चिपकु लाल को लस्सी के गिलास मिले, भीड़ में से कुछ लोग बोल पड़े -

"देख रहे हो विनोद ! ये दो साधू तो लस्सी ले उड़े। हम तो करते ही रह गए अनुरोध। लाइन वाइन का मतलब ही क्या रह गया है अब तो ? जब दिमाग का दहीं हो जाएगा न, तो यही लोग बोलेंगे कि बेटा ! यह अच्छी बात नहीं है। अच्छा नहीं होता करना क्रोध।"

रमता जोगी ने गिलास के ऊपर सजाई गई ताज़ी मलाई की पर्त को और उसमें पड़े मेवों को बड़े स्वाद ले के खाते हुए, उस शिकायतकर्ता को लगभग चिढ़ाते हुए कहा, "वाह, अद्भुत ! क्या शानदार ! क्या टेस्ट है ? जिसने लस्सी नहीं पी, उस ने तो ज़िन्दगी ही नहीं जी।"

फिर उस मीठी शीतल लस्सी का एक लम्बा घूँट भरते हुए रमता जोगी ने कहा , "इस संसार में लगभग सभी लोग अपने आस पास के लोगों से तुलना करते है ,एक अनबूझ भीतरी कम्पीटीशन में लगे रहते हैं। उसकी गाड़ी मेरी गाड़ी से लम्बी है ,उसका घर मेरे घर से ज्यादा आलीशान है, उसके पास शोहरत है, काबिलियत है,इतनी दौलत है। स्वपन - जो अपुन के थे, वो यह साला जी गया। नंबर तो हमारा था और यह पहले लस्सी पी गया।"

चिपकु लाल ने भी ठंडी लस्सी का एक लम्बा घूँट भरा और होंठों पर लग चुकी मलाई को चाटा और जोगी से कहा, "बिल्कुल, रीस करते रहने वाले और दूसरों की बेहतरी देख के जलने वाले लोग, कहते हैं न - अगर होना ही था तो मेरी ही पॉकेट में छेद क्यों ? उसकी कमीज़ मेरी कमीज़ से सफ़ेद क्यों ?"

फिर उसने एक ही सांस में बची खुची लस्सी समाप्त की और जोगी से कहा, "अभी अभी मेरे मन के आकाश में एक कल्पना रूपी चिड़िया ने उड़ान भरी है, मैंने एक फनी सिचुएशन विज़ुअलाइज़ करी है। ईगो कहती है - "मेरी खुशफहमी की नींद ब्रेक न करना, मेरी शांति छिन जायेगी ,प्लीज मुझे ओवरटेक न करना।"

रमता जोगी ने ज़ोर का एक ठहाका लगाया और लस्सी के खाली हो चुके गिलासों को दुकान के काउंटर पर रख कर, जब लस्सी के पैसे देने चाहे तो दुकानदार ने उन्हें लेने से विनम्रता पूर्वक मना कर दिया।

रमता जोगी ने चिपकु लाल से कहा, "आओ चलें। दुनिया का तमाशा और देख लें। तुलना की पैठ कितनी गहरी है उसे ज़रा सा और देख लें। इस तप्ती गर्मी में लस्सी ने जो सारे तनबदन में शीतलता की, सुकून की, लहर उमड़ाई है उसे औरों तक पहुंचाएं ज़रा। "आओ चलें" का गीत गायें ज़रा।"

दूकान से बाहर, सड़क के उस ओर, आंधी से गिरे एक पेड़ को देख के, रमता जोगी ने चिपकु लाल से कहा, " देखो तो ज़रा ! यह पेड़ हमसे क्या कह रहा ? यह गिरा क्योंकि यह गहरे न गया। इसकी जड़ें गहराई की महत्ता न जान सकीं। जो गहरा न जाएगा वो सूख जायगा। आंधी में टूट जाएगा। जड़ें उथलेपन में ही अटक गयीं। वहीं भटक गयीं। इसकी जड़ों ने ये गीत गाना बंद कर दिया था - आओ चलें, गहराई की ओर चलें। जो उथला है उसमें क्रोध होगा। जो उथला है उसके प्रति प्रकृति में भी क्रोध होगा। और जो चला गया गहरा, उसे तो बोध होगा। क्योंकि वह प्रवाह में होगा। उसके लिए न कोई अब अवरोध होगा।

आओ चलें। इसी मुद्दे पर गाओ चलें -

जड़ें नहीं जिसकी गहरी धरती में
आँधियों में पेड़ वही उखड़ा हुआ है

क्या बिगाड़ लेगी गर्म लू भी उस फ्रिज़ का
जो विद्युत् सप्लाई से जुड़ा हुआ है ?

तुझ अतुलनीय को, कौन है यहाँ जो
तेरे महिमा मंडल को शेक करेगा ?

रेस जब किसी प्रकार की कोई है ही नहीं
फिर कौन है यहाँ जो तुझे ओवरटेक करेगा ?"

रीस की टीस

इस समय वे दोनों एक कॉलोनी के सामने थे। यहाँ कई खूबसूरत मकान थे और चमचमाती इम्पोर्टेड गाड़ियां उन मकानों के सामने खड़ीं थीं। कुछ घर साधारण से थे और अमीरों की बस्ती में बेमेल से प्रतीत हो रहे थे।

एक मकान की छत पर, अभी अभी बाबू सीढ़ियों से ऊपर आया, लुंगी बनियान पहने, दातुन करते हुए। तभी उसकी नज़र बगल वाली बिल्डिंग पर सिगार पीते सूटेड बूटेड उसके पड़ोसी पर पड़ी। जो हमेशा की तरह आज भी ब्रांडेड कपड़ों में था। बाबू को मालुम था कि उसे उसके पड़ोसी ने हर मामले में ओवरटेक किया हुआ है। उसकी महत्ता के स्वनिर्मित ख्याली पुलाओं को, बड़े जतन से खड़े किये हुए उसके रेत के महलों को, ब्रेक किया हुआ है।

रमता जोगी ने इसी परिदृश्य के सन्दर्भ में बोलना शुरू किया, "जब नीचा दिखाया जाना क्षणिक होता है,जैसे सड़क पर ओवरटेक हो जाने पर या किसी बहस - विवाद में हार जाने पर, तो दुःख होता है जो कभी भी क्रोध में बदल सकता है। लेकिन जब ओवरटेक होना,पराजित होना, लम्बे समय के लिए हो और उपरोक्त उदाहरणों की तरह डायरेक्ट न हो तो फिर यह ईर्ष्या में बदल सकता है। ईर्ष्या के मामले में प्रत्यक्ष और सक्रिय मात की अनुभूति नहीं होती बल्कि धीमी सुलगती आग की तरह अप्रत्यक्ष और अक्रिय, नीचा दिखाए जाने की प्रतीति होती है।"

चिपकु लाल के चेहरे पर एक हलकी सी मुस्कान तैर गयी जैसे कि उसे कोई बात अचानक समझ आ गयी हो। उसने उत्साहित होते हुए रमता जोगी का वाक्य वहीं रोकते हुए यह कहा, "इसीलिए ईर्ष्या को जलन कहते हैं। एक धीमी सुलगन। पर यह मामला भी ओवरटेक का ही है। चोट खाया हुआ अहं कुछ इस तरह सोचता है या मौका लगे तो बोल के भी प्रकट कर देता है - " अच्छा खुद को क्या समझता है वो ? देखो कैसे गर्वित हो तन रहा है ? ज्यादा ही बन रहा है ? अरे उस जैसे तो मैंने छत्तीस देखें हैं। वगैरह, वगैरह।"

यह कह के चिपकु को एक अजीब सी आत्म - संतुष्टि महसूस हुई। उसे लगा कि अब वो भी रमता जोगी की तरह गहरी गम्भीर बातें कर सकता है और प्रकृति के छिपे रहस्य उजागर कर सकता है।

तभी रमता जोगी ने उसे एक प्यारी सी हलकी सी चपत लगायी और यह कहा, "अपने उन्नीस को अभी से बीस मत कर। तू ठीक ही जा रहा है, बस मेरी या किसी और की रीस न कर।"

फिर जोगी ने आगे बोलना शुरू किया, "ईगो को यदि किसी से छोटेपन का अहसास मिलता है तो वह छटपटाती है। क्योंकि "मैं" का मतलब है अपनी प्रधानता। यह "मैं" किसी और की अहमियत को नहीं मान सकता। अहम् का एक अर्थ प्रमुखता होना भी है। समस्या यह है यह प्रमुखता सभी को चाहिए और यह हो नहीं सकता। इसीलिए संसार में हर तरफ झगड़े हैं, विवाद हैं। इसीलिए मनुष्य के मन में एक अंतहीन विषाद है।

यदि वह यह जान लेता कि प्रत्येक व्यक्ति अनोखा है और उस जैसा कोई दूसरा इस विश्व में तो क्या पूरे ब्रह्माण्ड में भी नहीं हो सकता, तो उसकी दिल की बेचैनी कुछ कम होती, फिर कोई रीस न होती, उसके दिल में उठती फिर कोई टीस न होती।

रमता जोगी ने गुनगुनाना शुरू किया -

" नज़रें सदा लगी रहती हैं
बस इसी एक खोज में
कि पड़ोसी ने क्या ख़रीदा है
नया, एक दो रोज में ?

दूसरे क्या कर रहे, क्या कह रहे
बस यही एकमात्र तलाश है
अपनी फ़िक्र फिर कर लेंगें,अभी
पछाड़े जाने का टेरर ख़ास है

यह रीस की ललक है बेमानी
क्योंकि दौड़ में कोई दूसरा है ही नहीं
आप अनोखे हो,अद्धित्तीय हो
क्योकि होड़ में कोई दूसरा है ही नहीं

बुझा इस धीमी आंच को,आओ चलें
निकल इस भूलभुलैया से, आओ चलें
अतुलनीय है प्रशांति का गाँव ,चलें
आओ चलें, आओ चलें।

रमता जोगी और चिपकु लाल अब भावनाओं के भंवरों से परे, एक नशीली मस्ती से भरे, सड़क पर चलते जा रहे थे, हौले से "आओ चलें" वाला गीत गाते जा रहे थे। उनके दिलों में किसी से कोई कम्पटीशन न था,कोई तुलना न थी, कोई रीस न थी,इसीलिए उनके दिलों में कोई बेचैनी न थी, कोई टीस न थी।

लेकिन बाकी दुनिया में यह सुकून न था, प्रशांति से विचलित न हों किसी भी हालत में, ऐसा किसी के मन में कोई जुनून न था।

स्पीड

वह शानदार, नयी बनायी हुए सड़क, एक तीव्र मोड़ से मुड़ रही थी जो बायीं और मुड़ते हुए घाटी के साथ साथ चल रही थी।बायीं ओर एक गहरी खायी थी। सड़क के दायीं ओर काली चट्टानों से बनी पहाड़ी की सीधी खड़ी चढ़ाई थी। ऊपर पहाड़ी के शिखर पर एक स्टील का छज्जा लगा हुआ था जहाँ से टूरिस्ट नीचे का दृश्य देख सकते थे। रमता जोगी और चिपकु लाल मुड़ती हुई सड़क से ठीक पहले घाटी की तरफ बने बेंच पर बैठ के आते जाते वाहनों को देख रहे थे। एक युवा सन्यासी भी तभी वहां आ पहुंचा और उन्हें प्रणाम करता हुआ उसी बेंच पर जा बैठा।

एक बाइक बहुत तेज़ गति से फर्राटा भरते हुए अन्य गाड़ियों के दाएं बाएं से लहरा के निकलते हुए पल भर में मोड़ के दूसरी ओर ओझल हो गयी। उसने अपनी गति बिलकुल भी धीमी न की जो अमूमन मोड़ों पर, ख़ास कर पहाड़ी मोड़ों पर, सभी गाड़ियां करती ही हैं।

युवा सन्यासी ने रमता जोगी से कहा, "यह क्या बचकानी हरकत है ? कोई रेस चल रही है क्या जिसका इसे डर है कि यह हारेगा ? खुद तो मरेगा ही औरों को भी मारेगा। पता नहीं लोग इतनी आफत में, इतनी जल्दी में क्यों रहते हैं ?"

चिपकु लाल बीच में ही बोल पड़ा, " आजकल की लाइफ ही फ़ास्ट है। ज़ल्दबाज़ी का तूफानी ब्लास्ट है। लोगों के पास समय कम और जिम्मेदारियां ज्यादा हैं। करें भी तो करें क्या ?"

"नहीं ये बात नहीं है" युवा सन्यासी ने कहा, "कम समय और अधिक कमिटमेंट्स - यह स्थिति तो सब के लिए है, सिर्फ इस बाइक सवार के लिए ही नहीं है। देखो न, बाकी सब आराम से जा रहे हैं और मोड़ पर धीमे हो जा रहे हैं। मुझे तो लगता है यह स्टाइल मार रहा है। और यह इसके अपने लिए तो खतरनाक है ही औरों के लिए भी है।"

रमता जोगी ने, जो अभी तक मुस्कुराते हुए दोनों को सुन रहा था, बोलना शुरू किया, "स्पीड का मतलब है -एक अंधविश्वास कि जैसा सोचा है, इस दुनिया में बिल्कुल वैसा ही होने

वाला है, कि कोई अप्रत्याशित और हमारी प्लानिंग से इतर कुछ और तो हो ही नहीं सकता। कोई अन्य वाहन या जीव - जंतु या कोई पहाड़ से लुढ़कता हुआ कोई पत्थर उनके मार्ग में अचानक नहीं आएगा। स्पीड है - एक पूर्वनिश्चित स्थितियों - एक पूर्वनिश्चित दुनिया पर अडिग भरोसा रखना। पर ऐसा वास्तविक दुनिया में होता नहीं। यहाँ कुछ भी हो सकता है। नियति अक्सर हमें सरप्राइज देती है। जब हम उचित स्पीड में होते हैं तो अचानक बदल गयी नयी परिस्थिति और कालक्रम के साथ हम स्वयं को एडजस्ट कर सकते हैं। स्पीड में उचित प्रतिक्रिया के लायक उपयुक्त टाइम नहीं मिल सकता जो दुर्घटनाओं का कारण है।

पारिवारिक जीवन में भी स्पीड से व्यक्त की गयी भावनाएं विवादों का कारण बनती हैं। वो भी एक प्रकार के एक्सीडेंट्स हैं, दुर्घटनाएं हैं। बोधयुक्त, स्थितप्रज्ञ, समझदार व्यक्ति न बहुत धीमे होता है न बहुत तीव्र। स्पीड का अर्थ है जल्दी से लक्ष्य हासिल करने की ललक। बस उड़ के ही पहुँच लें वहां। इसमें यात्रा को एन्जॉय न कर के सिर्फ मंज़िल की लालसा होती है। हर चीज़ जल्दबाज़ी में करने की प्रवृत्ति का नतीजा होता है स्पीड की धुन। स्पीड है ज्यादा, और ज्यादा, और भी ज्यादा लक्ष्यों की सीमित समय में प्राप्ति का जुनून। पर यह वस्तुत: उथलापन है, बचकानापन है, नादानी है। लहरोंपर आप गति से सर्फिंग कर सकते हो ,मोटर बोट दौड़ा सकते हो। क्योंकि वे लहरें हैं - उथली। सागर की तलहटी में आप उतनी तेज़ कोई भी बोट नहीं दौड़ा सकते जितनी तेज़ आप ऊपर लहरों में उड़ाते हो। तो स्पीड सदा एक सतही मानसिकता है, मन की बेचैन चंचलता की निशानी है।

बताओ, स्पीड से दौड़ने के कारण हाँफते, एक के बाद एक लक्ष्यों को हासिल करते, उथले मन में चैन कहाँ, आनंद कहाँ, बोध की संभावना कहाँ, सौंदर्य की सराहना कहाँ, मन और समय के थम जाने की अनुभूति - जो प्रेम का लक्षण है, ऐसी वाली उदात्त भावना कहाँ ?"

युवा सन्यासी भाव विभोर हो चुका था। वह उठा और उन दोनों से विदा लेते हुए उन्हें प्रणाम कर आगे बढ़ गया। रमता जोगी ने गुनगुनाना शुरू किया -

आओ चलें,आओ चलें
आओ चलें,आओ चलें

खाया ज़रूरत से भी ज्यादा
भूख तो भी ख़त्म न हुई
सारी ज़िन्दगी रहे सफर में
मंज़िलें तो भी कम न हुईं

थोड़े टाइम में पा लेंगें बहुत
ऐसे भ्रम में आलिम छले गए
लोगों ने बताया उनके बाबत
जल्दी में थे, वे चले गए

रास्ते भी कम खूबसूरत नहीं होते
होंगी सुन्दर चाहे कितनी ही मंज़िलें
बदहवास इन मुसाफिरों को बताओ चलें
तसल्ली से गाड़ी चलाओ, चलें

आओ चलें ,आओ चलें
आओ चलें ,आओ चलें।

आध्यात्मिकता

रमता जोगी और चिपकु लाल ने पहाड़ी के शिखर से जंगल की ओर जाने वाले मार्ग पर अब चलना शुरू कर दिया। चीड़ और देवदार के वृक्षों की बजाय अब केले अमरुद और पपीते के पेड़ों की कतारें दिखना शुरू हो गयीं थीं। कई झोंपड़िया उन पेड़ों के झुरमुटों के बीच बनीं थी जिनके बाहर कुछ गाय और बकरियां इधर उधर घूमती दिख रहीं थीं। फिर उस बस्ती से आगे घने जंगल में एक आश्रम दिखाई दिया। कुछ साधू भगवा वस्त्रों में वहां आश्रम के कुछ भाग के निर्माण और दुरुस्त करने के कार्य को करते हुए दिख रहे थे। इनको देख के एक साधू आगे आया और बड़े आदरपूर्वक आश्रम के भीतर बने एक कक्ष में ले गया।

इन को आसन पर बिठा के, पास के एक झरने से शीतल जल ला के,उन्हें दिया गया। फिर जब वे दोनों थोड़ा विश्राम कर चुके तो कुछ समय बाद एक सन्यासी ने रमता जोगी से प्रश्न पूछा, “भगवन ! आप आध्यात्मिक जीवन से क्या अभिप्राय समझते हैं ? हम इसके लिए क्या स्पेशल करें ? बेशक हम सब साधू हैं और साधनायें कर रहे हैं और हमें पता है आध्यात्मिकता क्या है तो भी इसका सच्चा स्वरुप क्या है हम आपके श्रीमुख से सुनना चाहते हैं ?”

रमता जोगी ने मुस्कुरा के कहा, “स्पेशल ? यही तो नहीं करना है। कुछ भी अलग हट के, आम जीवन से भिन्न, कुछ भी नहीं करना है। दरअसल आप आलरेडी कुछ हट के कर ही रहे हो। उस अखंड सत्ता से स्वयं को खंडित कर ही रहे हो। आप एक कृत्रिम आधात्मिक जीवन की कल्पना कर के वैसे ही पथ से भ्रष्ट हो रखे हो। भिन्नता ही द्वैत है। स्पेशल यानी कुछ अलग।”

इतना कह के रमता जोगी अपने आसन से उठ गया और आश्रम की दीवार के थोड़ा नीचे बहती उस पहाड़ी नदी के किनारे से एक गुठली सहित पौधा ले आया और उसे दिखाते हुए बोला, “ देखो, इस गुठली से वह पौधा निकला। सारी समस्या इस - उस के भेद की ही है। पौधा जमीन के ऊपर है - प्रकाश में। इसे सब दिख रहा है - प्रकाश से प्रकाशित यह विश्व दिख रहा है। वनस्पतियाँ, जीव - जंतु, धरती, नीला आकाश, बहती नदी - सब दिख रहा

है। यह ज्ञानी है। लेकिन बीज या गुठली अंधकार में है। उसे कुछ नहीं दिख रहा। वह निपट मुर्ख या अज्ञानी जैसा भास् रहा है। ऐसा सोचना ही अहंकार है ,मतिभ्रम है ,भेद है, बुद्धि की सीमितता है, अल्पता है। क्यों ? क्योंकि जो प्रकाश में है ,व्यक्त है, वो उसी अंधकार से, उसी अव्यक्त से अभेद है, अभिन्न है। क्योंकि यदि यह बीज ही न होता तो वह पौधा ही कहाँ से होता। इनमें भेद करना कि एक श्रेष्ठ है और दूसरा नीच है - ही असली अज्ञान है क्योंकि भेद का अनुभव ही, भ्रम है, माया है, सीमित बुद्धि की क्रिया है। एक से दूसरा हुआ - यह अनुभव ही समय है। मेरी दृष्टि से देखो। मैं दोनों को एक के बाद दूसरा नहीं - बल्कि दोनों को एकसाथ देखता हूँ। एकसाथ देखना अभेद देखना है, अद्वैत देखना ही परम सत्य है। भेद दृष्टि ही अज्ञान की पराकाष्ठा है।"

फिर रमता जोगी उसी पौधे को वापिस उसी जगह नदी किनारे ज़मीन में यथावत लगा के लौट आया और यह कहा, " आप मात्र सिद्धांत से अद्वैतवादी हो किन्तु कर्म से द्वैत पैदा कर रहे हो। आप खुद को स्पेशल माने बैठे हो क्योंकि आप स्पेशल कुछ कर रहे हो। बाकी लोग तो अज्ञानी, मतिभ्रमित और आपके स्तर से नीचे हैं। हैं न ? यह भेद - दृष्टि ही आपको आगे बढ़ने नहीं दे रही। यदि आप अन्यों से अभेद हो तो आप विनम्र हो। जिसका अर्थ है कि आप अहं - शून्य हो तो ही आप स्वयं को देख पा सकते हो, जैसे कि आप हो, वास्तव में।

यह भेद दृष्टि और लोगों के सम्बन्ध में नहीं बल्कि रोजमर्रा के क्रियाकलापों के सम्बन्ध में भी है। कोई विशिष्ट फंक्शन है जैसे कि बर्थडे ,शादी ,प्रमोशन पार्टी या अन्य कोई ऐसा ही अवसर। हम उसे विशिष्ट मानते हैं, उसकी तैयारी करते हैं। लेकिन सामान्य आम पलों की अवहेलना करते हैं। विशिष्ट जनों की, वी आई पी लोगों की ख़ास तरीके से आवभगत करते हैं, उनकी रेस्पेक्ट करते हैं और मेड, नौकरों और सामाजिक और आर्थिक तौर पर निम्न स्तर के लोगों को हेय दृष्टि से देखते हैं और उनके साथ बुरा बर्ताव करते हैं। ऐसे भेद - दृष्टा उच्च जीवन के मानकों पर कभी खरे नहीं उतर सकते और उस स्तर पर कभी जा नहीं सकते। आध्यात्मिकता तो दूर की कौड़ी है ऐसे लोगों के लिए।

आध्यात्मिकता है आत्म अन्वेषण। खुद को जानना। विज्ञान सदा बाहर देखता है क्योंकि इंसानी मन सदा बाहर देखता है। तो बाहर के जगत को देखना या जानना स्वाभाविक है,

आसान है। इंसान आसान काम ही करना चाहता है। इसलिए अपने जिज्ञासु फोकस को भीतर की ओर मोड़ना ही आत्मज्ञान का प्रथम बिंदु है।"

यह सब गूढ़ ज्ञान उक्तियाँ सुन के वह सन्यासी अत्यंत प्रसन्न हुआ और बारम्बार रमता जोगी को प्रणाम करने लगा। फिर उसने पूछा, " जोगी जी, ऐसे अभेद दृष्टि हेतु निश्चित ही मन को अत्यंत उच्च स्तर की अतिरिक्त ऊर्जा चाहिए। वह कैसे और कहाँ से मिलेगी ?"

रमता जोगी ने गंभीर स्वर में कहा, " यह ऊर्जा मोह और इच्छाओं की तंग गलियों में ही घूमते रहने से नहीं मिलने वाली। हमें हाई वे पर जाना होगा। वह हाई वे है आत्म ज्ञान का। खुद को समझने का। जीवन के प्रत्येक कृत्य को गहराई से देखने का। यह हाई वे ऐसा है जिसमें सफर करते वक़्त आपको न तो स्पीड ब्रेकर मिलेंगे और न ही कोई ट्रैफिक जैम। यहाँ सफर सुखद और बिना अड़चनों के होता है।

जब हम अपने भीतर के अवरोधों और अपनी बेड़ियों को हटा देते हैं तो एक अर्थपूर्ण और श्रेष्ठ जीवन की शुरुआत होती है। इसके लिए हमें चाहिए होगी ऊर्जा, अतिरिक्त ऊर्जा। जब हम बीमार होते हैं या किसी दर्द में होते हैं तो हमारी ऊर्जा उस रोग या तकलीफ़ को मिटाने में ही खर्च हुई रहती है तो फिर नेक्स्ट लेवल पर जाने के लिए अतिरिक्त ऊर्जा कहाँ से मिलेगी ? इसलिए शारीरिक और मानसिक त्रुटियों यानी भावनात्मक तूफानों और जल्दबाज़ी के निर्णय लेने की प्रवृत्तियों से मुक्त होते ही हमारे पास स्पेयर ऊर्जा उपलब्ध हो जायेगी जो हमें अगले आयाम तक ले जायेगी।

यही आध्यात्मिक जीवन का मूल है। जीवन से सभी भेदभावों और विभाजित करने वाली प्रवित्तियों का ह्रास ही अद्वैत है और अद्वैत दृष्टि ही अद्वैत सत्ता तक हमें ले जायेगी, यह गुह्य सूत्र है। जब तक आप ज्ञानी हो और शेष नादान, आप ऊँचे हो और अन्य नीचे ,तब तक अद्वैत सिद्धि तो आप भूल ही जाओ कि आपके जीवन में कभी होगी।"

फिर रमता जोगी और चिपकु लाल ने सब से विदा ली और अपने हाथ ऊपर उठा के बाय के अंदाज़ में हिलाते हुए ,यह गीत गाते हुए, जंगल से वापिस शहर की ओर लौटने लगे -

जब न होंगे हर्षातिरेक
न ही कोई खेद होंगे

न होगी तुलना किसी से
न द्वेष और मतभेद होंगें

तब उद्भूत होगा अद्वैत
परम सत्ता से अभेद होंगे

प्रेम पथ पर चलाओ, चलें
प्रेम का पाठ पढ़ाओ, चलें

आओ चलें, आओ चलें
आओ चलें, आओ चलें।

बेकार

पहाड़ी सड़क के नीचे दूर तक घास के मैदान थे। सड़क गोल गोल घूमते हुए पहाड़ के शिखर तक जाती थी। नीचे घास के मैदान में एक बड़ी सी चट्टान थी। सड़क से नीचे उतर के रमता जोगी और चिपकु लाल उसी चट्टान पर जा बैठे। दोनों दूर तक फैली घास की चादर को देख रहे थे और ठंडी हवाओं के झोंको से उनके लम्बे बाल उड़ रहे थे।

एक कार ऊपर सड़क पर रुकी। उसका दरवाज़ा खुला और एक काले सूट में नेकटाई और हैट लगाए एक अधेड़ आयु का व्यक्ति उसमें से उतरा। उसने इधर उधर देखा और फिर किसी को उसे यह कहते हुए सुना गया, " पुरातन ! देखो तो क्या अद्भुत सीनरी है यहाँ की ? हरी घास, नीला आकाश, सफ़ेद बादल, नीचे एक पतली पहाड़ी नदी ,उसके किनारों से ऊपर उठते हुए सैंकड़ों रंगों के फूलों की कतारें ! देखो तो ! ज़न्नत है -ज़न्नत !"

तभी एक व्यक्ति अनमने मन से कार से उतरा। शायद वही पुरातन था। उसके बेतरतीब उलझे बाल और बड़ी हुई दाढ़ी साफ़ नज़र आ रही थी। उसने अपनी उँगलियों के बीच फंसी सिगरेट से एक लम्बा क़श खींचा और यह बुदबुदाया, "यहाँ ऐसा कुछ भी नया नहीं लग रहा है मुझे। हमने ऐसे नज़ारे तो बहुत देख लिए।" और फिर वह वापिस कार में बैठने के लिए चल दिया। तभी उसकी नज़र नीचे घाटी में स्थित उस चट्टान पर पड़ी जिस पर रमता जोगी और चिपकु लाल बैठे हुए थे।

पुरातन के कदम ठिठक गए। उसकी आँखों में एक चमक आ गयी। उसने दुसरे व्यक्ति से लगभग अनुरोध करते हुए कहा, "नवीन ! आओ नीचे चलते हैं वहां। मुझे उन साधुओं से कुछ विचार विमर्श करना है।"

यह सुनते ही नवीन ने तुरंत हामी भर दी क्योंकि वह चाहता था कि पुरातन किसी भी तरह अपने मन के विषाद से निकले।

चट्टान के पास उनके पहुँचते ही रमता जोगी मुस्कुराये। पूछा कहो कैसे आये ?

पुरातन ने हाथ जोड़ कर, अपनी झिझक छोड़ कर, यह कहा,"जोगी महाराज ! मेरे पास भगवान् की दया से सब कुछ है लेकिन एक बेचैनी सदा मुझे जकड़े रहती है, उदासी की एक लहर सदा मुझे पकड़े रहती है। अनजान से भय लगता है। कोई शुरुआत कर नहीं पाता। ज़िंदगी रुक गई है। कोई उपाय बताएं।"

यह सुनते ही जोगी ने एक ज़ोर का अट्टहास लगाया और हँसते हुए उसे कहा, "बेकार हो जाओ।"

चिपकु लाल ने आश्चर्य से कहा, "महाराज ! उसकी ज़िन्दगी तो वैसे ही बेकार हो रखी है, और क्या बेकार होनी है ?"

रमता जोगी - "देखो तुम अपने पूर्वाग्रहों ,सिद्धांतों और आदतों के घेरे में क़ैद हो। "अपने ही" चश्मे से सब देखते हो। लेकिन चश्मा गन्दा है। इसे उतार फेंको। डायरेक्ट देखो। हम अपने विचारों की प्रिय आरामगाह में ही रहना चाहते हैं, अपनी ही टूटी फूटी किसी पुरानी नाव में बैठ कर नदी में बहना चाहते हैं। नाव में छेद है। उतरो इससे। तैरो नदी के ताज़े पानी के बहाव में।

एक नया अनुभव लो, फेंक के परे, अपना पुरातन चोगा। बंद कमरों में रहने वालों को, ताज़ी हवा क्या होती है यह कैसे पता होगा?

तुम्हारा दोस्त कार से उतरा इस शानदार अद्भुत अलौकिक नज़ारे को देखने के लिए। लेकिन तुम वहीं कार में ही बैठे रहे। क्योंकि जो भीतर की तंग गलियों में ही उलझा हुआ है ,वह भला बाहर की दुनिया के लिए क्यों उत्सुक होगा ,क्यों "ज्ञात" से खाली होगा ? वह तो अवास्तविकता में ही बिजी है इसीलिए तो अन इजी है।"

नवीन - "महाराज, सत्य कहा आपने। वह तो मुझे यहाँ कार रोकने को भी मना कर रहा था जबकि मैंने उसे कहा भी था कि ऐसा सुन्दर दृश्य कहीं और नहीं मिलने वाला। एक बार उतरो तो सही कार से।"

पुरातन - "अब समझ आया कि आपका ऐसा कहने का क्या मतलब था कि - बेकार हो जाओ। आपका मतलब था कि कार से उतरो, खुद की बनाई हुई चारदीवारी से निकलो।"

चिपकु लाल - " ज़िन्दगी सदा इस सूत्र से ही नहीं चला करती कि - सब मेरे हिसाब से ही चले या समस्त घटनाक्रम मेरे जाने पहचाने दायरे में ही हो। हमारे पूर्व निर्धारित निर्णय ही बेड़ियाँ बन जाते हैं। इसलिए "ज्ञात" की कार से बाहर निकलें और जो अनजाना है, एकदम ताज़ा है, नया है - उसका स्वाद लें। इसीलिए हम तो इन जोगी महाराज का निरंतर प्रवाह में रहने का मन्त्र ही अपनाते हैं और यह दिव्य गीत गाते हैं - आओ चलें, आओ चलें।"

फिर रमता जोगी ने गुनगुनाना शुरू किया और अन्यों ने भी सुर मिलाना और संग गाना शुरू किया -

"*संग मेरे सब, गाओ चलें*
आओ चलें ,आओ चलें

रुक जाना अटकाव है
पुरातन का भटकाव है

नया कहाँ है ज्ञात में
स्पष्ट नहीं कुछ रात में

है प्रत्यक्ष दर्शन प्रभात में
खोज होती सिर्फ अज्ञात में

जब हम दुर्बलता से झुके
भ्रम कारण हों रुके

क्षीण हो रहें हों हौसले
तो दृढ़ यह फैसला लें

आओ चलें, आओ चलें
आओ चलें, आओ चलें।"

आलू की टिक्की

एक रेस्तरां के बाहर एक बड़े से गोल तवे पर टिक्कियां सिक रहीं थीं। एक दंपत्ति के बीच बहस चल रही थी। पत्नी ने कहा कि यहाँ से बेहतर टिक्की तो उसके मायके में मिलती है।

पति, जो उसे बड़े अनुरोध और चाव से यहाँ लाया था, बोला,"अभी तुम पहले यह वाली टेस्ट तो कर लो एक बार, फिर बताना कि कहाँ की टिक्की अच्छी होती है ? अपनी टांग ऊँची रखने के मैच के लिए, अपने तर्क - सिक्के को टॉस के लिए, अभी न उछालो। बिना खाये, केवल अपने पूर्वाग्रह के आधार पर, तुम निष्कर्ष न निकालो।"

बेयरा तभी पत्तल के दौनों में टिक्कियां उनके सामने रख गया। टिक्कियों को बीच से क्रश कर के दही,चटनी,सेव,अनारदानों से सजा के पेश किया गया था। इमली की चटनी में अंगूर और केले के गोल टुकड़े भी थे जिन्होंने पूरे पत्तल को बेहद शानदार और स्वादिष्ट प्रतीत होने वाला बना दिया था।

पत्नी ने उस पत्तल को मेज़ पर अपने से दूर धकेलते हुए कहा , "दही कौन डालता है टिक्की में? हमारे यहाँ तो चटनी और मसाले ही डाले जाते हैं। इनको नहीं आती ऑथेंटिक टिक्की बनानी। केवल इनोवेशन करने से ही कोई चीज़ बढ़िया बन जाए, यह ज़रूरी तो नहीं।"

धीरे धीरे वाद - प्रतिवाद इतना बढ़ गया कि दोनों, उन पत्तलों को वहीं, वैसा ही, टेबल पर छोड़ के, बिना खाये वहां से चले गए।

पत्तल के दौनों में पड़ी हुई और उस दंपति द्वारा छोड़ी गयी टिक्कियां वैसी ही पड़ीं थीं। अभी भी उनमें से भाप की एक लकीर निकल के ऊपर उठ रही थी। इस पूरे प्रकरण में टिक्कियों का क्या दोष था ? बताओ ?

रेस्तरां के बाहर खड़े और यह सारा माज़रा देखने वाले रमता जोगी ने चिपकु लाल से कहा, "देखा तुमने ? टिक्की का उपभोग कर आनंद की तलाश में आये थे ये पति पत्नी। लेकिन जब तक "मैं" मुखर है अर्थात मेरी सोच ,मेरी धारणाएं या निष्कर्ष ही प्रधान हैं, ऐसा सोचने वाले ये लोग जीवन में मज़े भी नहीं कर पाते। सुख प्राप्ति हो ही जाए, हरदम, ऐसा इनका

नसीब नहीं है। दिखते हों चलते बेशक थामे एक दूजे का हाथ, पर अंदर - गहरायी में ये करीब नहीं हैं। ये रुके हुए लोग हैं। अपने विचारों के स्टेशन पर ही, इनकी अपनी अपनी गाड़ियां अटकीं खड़ी हैं। इनका इलाज़ क्या है चिपकू लाल जी ?"

चिपकू ने बिना सोचे समझे उत्तर दिया, "आओ चलें। बस यही इलाज़ है इन लोगों का।"

रमता जोगी ने कहा , "यदि वह महिला पल भर के लिए भी अपनी धारणाओं और निष्कर्षों के मोह को त्याग देती और ऐसा कह देती कि "प्रिय मुझे तो यही लगता था कि शायद मेरी सोच ही सही है लेकिन मेरी सोच से ज्यादा महत्वपूर्ण और प्रिय, तो तुम हो प्रिय ! चलो आज इसे भी खा के देख लेते हैं " तो उसी टिक्की का स्वाद कई गुना बड़ जाता। क्योंकि "मैं" के छोटे से घेरे से अनुभूत सुख "मैं रहितता" के असीम सागर में, अनंत स्वाद में, तब्दील हो जाता क्योंकि "मैं रहितता " ही अनंतता है।

जब हम किसी छोटे से शहर की संकीर्ण दृश्यावली से, जिसमें तंग गलियों का एक जाल सा हो, बाहर आ के, अचानक अनंत फैलाव वाले विशाल सागर को देखते हैं, तो हमें एक अजीब सी ख़ुशी क्यों होती है ? वह इसलिए क्योंकि संकीर्णता से विस्तार की ओर प्रस्थान ही आनंद का रहस्य है। जब हम अपने क्षुद्र अहं से ऊपर उठ के दूसरे के दृष्टिकोण के प्रति संवेदनशील होते हैं तो यह आत्म विस्मृति ही प्रेम का द्वार खोल देती है क्योंकि "मैं" के स्वार्थी घेरे के लोप में ही प्रेम की अनंतता का उदय है।"

फिर रमता जोगी ने यह गीत गाना शुरू कर दिया -

"प्रेम के अभाव में,
अहं के प्रभाव मे
खुद में हैं अटके,
खुद में सब भटके

प्रेम ही है जो सिर्फ़
कहता है - आओ चलें
अनसुलझे मसलों को
सुलझाओ चलें

शरीर जब मरते हैं
तो अकड़ने लगते हैं
विचार हो जाने पर सख़्त
लोग लड़ने लगते हैं

हवा है तो ताज़गी है
प्रवाह है तो ज़िन्दगी है
प्रेम है तो प्रवाह है
तभी सब वाह वाह है

प्रेम कहता है भई अड़ो नहीं
व्यर्थ की बातों पर लड़ो नहीं
अपनी ही महत्ता के कसीदे
हर पल, निशदिन पढ़ो नहीं

केवल अपने ही दृष्टि बिंदु को
सर्वप्रधान न बनाओ ,चलें
आओ चलें ,आओ चलें
आओ चलें ,आओ चलें।

समोसा

एक भक्त के यहाँ रमता जोगी शाम की चाय के लिए निमंत्रित था। रमता जोगी सोच में पड़ गया – क्या किया जाए ? बुलावा सिर्फ उसी अकेले के लिए था। लेकिन परिस्थितयां ऐसी बनीं कि अब चिपकु लाल को भी साथ लेना पड़ा। कुछ देर में दोनों भक्त के निवास पर जा पहुंचे। भक्त द्वार पर ही उनकी बाट जोह रहा था। कुछ ही देर में सभी लोग लॉन में बिछायी गयी कुर्सियों पर जा बैठे।

थोड़ी ही देर में एक टेबल पर चाय समोसे और कुछ मिठाईयां रख दीं गयीं। भक्त का चार साल का बेटा वहीं मंडरा रहा था। ताकि वह समोसा कहीं उठा न ले इस लिए उसका बाप रह रह के घूरती नज़रों से उसे डरा रहा था। चारों ओर घूमते हुए भी उसकी नज़रें समोसों पर हीं थीं। उसे मेहमानों के सामने कुछ खाने की इजाजत नहीं थी लेकिन उसके मन पर थोड़े ही किसी का नियंत्रण हो सकता था ? मन ही मन वह उन स्टीमिंग हॉट स्वादिष्ट समोसों का स्वाद ले रहा था। उसके जी को ललचाते देख रमता जोगी ने उसे स्नेहपूर्वक अपने निकट बुलाया और उसके हाथ में एक समोसा थमाया। बच्चे ने तुरंत उसके किनारे खा लिए, समोसे की बहरी पर्त की पापड़ी भी चट कर दी लेकिन समोसे के भीतर के मसालेदार आलुओं को यह कहते हुए छोड़ दिया कि इनमें मिर्ची है। फिर वह घर के भीतर चला गया। उसका मंतव्य पूरा जो हो गया था। उसे सिर्फ समोसों की पापड़ी खानी थी और कुछ नहीं।

भक्त शर्माया और उस ने अपने बच्चे की इस हरकत के लिए क्षमा मांगी और फिर मुद्दे पे आया। उसने रमता जोगी से बड़ी ही श्रद्धा भाव से विनम्रता पूर्वक पूछा, “जोगी जी, मेरी आध्यात्मिक उन्नति क्यों नहीं हो रही ? जबकि मैं सारे ग्रन्थ पड़ता हूँ और संध्या आरती भी करता हूँ और ध्यान में भी बैठता हूँ। लेकिन मौन प्रबल नहीं होता। ध्यान मेरा सफल नहीं होता। आप समान कोई सिद्ध पुरुष ही मेरी समस्या का समाधान कर सकते हैं। कुछ तो बताईये प्रभु?”

रमता जोगी ने ज़ोर का एक अट्टहास किया और हँसते हुए भक्त से कहा, “तुम भटके हो, जहाँ थे, वहीं अटके हो। तुम्हें दर्द - तकलीफ न हो तनिक भी, इसलिए तुमने स्वयं अपने इर्द गिर्द एक जेल बनायी है। तुमने भी तो समोसे की सिर्फ पापड़ी ही खायी है ! है न ? ठीक अपने उस नादान बालक की तरह ?”

भक्त आश्चर्यचकित हो के बोला, “कहाँ खायी ? मैंने तो अभी कोई समोसा छुआ भी नहीं।”

रमता जोगी की हंसी रुकने का नाम ही नहीं ले रही थी। उसकी आँखों में इस हंसी के विस्फोट से आंसू भी आ चुके थे। बड़ी मुश्किल से उसने खुद को कण्ट्रोल किया और यह कहा, “मैं इस समोसे की तो कतई बात नहीं कर रहा हूँ, भोले बाबा। तुहारी ज़िन्दगी ही एक समोसा है। उसकी बाहरी परत सरल है, एक आयाम की ही है, एक ही स्वाद है , कोई मसाले नहीं, कोई स्वाद के झटके नहीं ,मिर्च के फटके नहीं। तुहारा बच्चा सिर्फ वही खा के गया न ? क्यों ? भीतर समस्या है। भिन्न भिन्न स्वाद हैं क्योंकि भिन्न भिन्न मसाले हैं। यह क्लिष्टता ही कन्फ्यूज़न है। अहसासों का फ्यूज़न है। मिर्च क्या है ? मिर्च कोई टेस्ट का नाम है ही नहीं। क्योंकि यह न तो नमकीन है ,न मीठा , न फीका ,न कड़वा। यह कोई टेस्ट नहीं है। जब जीभ उसे समझ ही नहीं पाती, जल जाती है तो उसे तीखा कहती है। जीभ को जला डालना तो तकलीफ है, टेस्ट नहीं। बच्चों को ये पसंद नहीं। उन्हें तो एकसमान अहसास चाहिए जैसे तुम्हें जीवन में सिर्फ बिना गड्ढों की, बिना झटकों की, सड़क ख़ास चाहिए। तुहें तो स्मूथ हाई वे चाहिए । कोई प्रॉब्लेम न आ जाए कहीं, ऐसा हर प्रकार से सुरक्षित - “माई वे” चाहिए। यह है कम्फर्ट जोन। यह है समोसे की पापड़ी।

लेकिन यह भी क्या कोई समोसा खाना हुआ ? समोसा तो सम्पूर्णता में होता है - पूरे स्वाद के साथ। सारे रंगों से, सारे पहलुओं से सजा, दुःखद और सुखद अंदाज़ के साथ। बिना विचलित हुए समान भाव से हर पल का स्वागत करना ही समोसा सही ढंग से खाना है। बिना मसालों के भोजन, सपाट भोजन - भला किसे खाना पसंद होगा ?”

यह अद्भुत व्याख्या सुन के चिपकु लाल से रहा न गया और वह तुरंत बोल उठा, “बिल्कुल। इसे ही शास्त्रों में तितिक्षा कहा गया है। जोगी जी की ख़ासियत ही यह है कि वो गूढ़तम सत्यों को भी सरलता से और रोजमर्रा की वस्तुओं से समझा देते हैं।”

रमता जोगी की फिर हंसी छूट गयी। अब चिपकु की ओर मुंह कर के उसने कहा, “ओ किताबी कीट ! भाव को पकड़। शब्दों में ही न उलझ कि किस ग्रन्थ ने या किस गुरु ने क्या कहा है? शब्दों में ही न खुद को घसीट। किसी अंतर्दृष्टि के सहसा प्रकट होने पर फ़ौरन ही किसी पूर्व कथित उक्ति से तुलना करने लगने या उस से समर्थित होने की चेष्टा में, उस नव अनुभूति की ही न कर दे मिट्टी पलीद।”

फिर दोनों ने उस भक्त से विदा ली और उस लॉन से बाहर निकल के सड़क पकड़ ली और एक पहाड़ी की चोटी पर बने शेड की ओर, रात्रि निवास के लिए, चल पड़े यह गीत गाते हुए –

अनुकूल मौकों को अगर चाहा
प्रतिकूल पलों को जी भर कोसा

कैसे कह सकोगे खा केवल पापड़ी
कि एन्जॉय करा है हमने पूरा समोसा ?

लायी है नियति जो भी भोजन
सम भाव से उसे खाओ, चलें

आओ चलें,आओ चलें
आओ चलें ,आओ चलें।

ज़ोम्बी जगत

पर्वतों के शांत शिखर बादलों की चादर में लिपटे प्रात:कालीन ध्यान में खोये हुए थे। एक पहाड़ी की चोटी पर, एक शेड के नीचे बिछे, एक लकड़ी के तख़्त पर रमता जोगी और चिपकु लाल सोये हुए थे। सुबह की पहली किरणें उन पर पड़ना शुरू हो गयीं थीं। हवा चल पड़ी थी और नीचे घाटी में एक झील में लहरें उमड़ना शुरू हो गयीं थीं। पहाड़ों के शिखरों और ढलानों पर बिछी हरी घास पर सुनहरी किरणों की नरम पर्त चढ़ गयी थी।

अचानक चिपकु हड़बड़ा के उठ बैठा और ज़ोर ज़ोर से अपनी आँखें मलता हुआ इधर उधर देखने लगा।

“ज़ोंबी ,ज़ोंबी ! कहाँ गए ज़ोंबी ? हे भगवान, वे मुझे घेर के खड़े थे और हर तरफ बस वही थे। शुक्र है कि यह सपना था और मैं बच गया।” चिपकु ने राहत की सांस ली।

रमता जोगी ने तख़्त से उठते हुए कहा, “ चिपकु लाल जी, अन्धविश्वास की डोर कच्ची होती है उस से लटक के झूलना मत। सुबह का सपना सच होता है। यह बात भूलना मत।” और फिर वह ज़ोर से हंस पड़ा, इतनी ज़ोर से कि शेड की छत पर बैठी चिड़ियाँ घबरा के उड़ गयीं।

चिपकु लाल ने शिकायती अंदाज़ में कहा , “क्या जोगी जी ? आप भी अच्छा मज़ाक कर लेते हो। मुझे डरा रहे हो ?”

रमता जोगी ने अब गंभीर स्वर में बोलना शुरू किया , “यह कोई मज़ाक नहीं है। ज़ोंबी का अर्थ होता है - जादू से चलता मृत शरीर या प्रेत। इस नींद में चलते शरीर को हम अधमरा कह सकते हैं या यह भी कि वह अर्धजीवित है। बात एक ही है। ज़ोंबी की अवधारणा एक किवदंती या सामाजिक कल्पना मात्र है।

पर सुनो, मेरे सम्मुख इसका क्या अर्थ है ? ज़ोंबी यानी एक ऐसा व्यक्ति जो बिना सोचे समझे मशीन की तरह काम करे। एक तरह से इंसानी रोबॉट। ऐसे ज़ोंबी तो सारे विश्व में घूम रहे हैं। क्योंकि इस विश्व में बड़ी संख्या में लोग अक्सर बिना सोचे समझे अपने अधिकतर काम करते रहते हैं, इसलिए वे ज़ोंबी जैसे ही हुए न ? वे मदहोश से ,कुछ कुछ

बेहोश से, विचारों और पूर्वाग्रहों के सम्मोहन में वशीकृत हुए इस जगत के सारे काम करते जा रहे हैं। सुबह शाम करते जा रहे हैं। एक अजीब मदहोशी है। एक अजीब बेहोशी है। यथार्थ जगत की अपेक्षा, विचारों और सूचनाओं के इस भ्रामक वर्चुअल वर्ल्ड में उनका अंतहीन भ्रमण ही इस हालत के लिए दोषी है। जब ध्यान द्वारा जागृत होंगें या सजग होंगें तभी ये होश में आयेंगें और ज़ोंबी बनने से बच पाएंगे।"

इसके बाद नित्य कर्म से निबट के पास ही बहती एक पहाड़ी नदी की पतली सी धार में डुबकी लगा के रमता जोगी ने किनारे पर खड़े चिपकु लाल की ओर देखते हुए यह गीत गाया –

किनारे पर ही बैठे रहोगे
तो प्रवाह से अनभिज्ञ रहोगे

जो पल गया उसे भुलाओ ,चलें
आओ नदी में डुबकी लगाओ, चलें।

अतीत की गिरफ्त करती दिल को दुःखी
फ़िक्र भविष्य की हैं वर्तमान से बेरुखी

जोम्बी बन तब तक गुमान में रहोगे
जब तक न नित्य वर्तमान में रहोगे

यंत्रवत जीओगे एक सम्मोहित बेहोशी में
जब तक न "इस वक़्त" विद्यमान रहोगे।

तमसो मा ज्योतिर्गमय गाओ, चलें
आओ चलें ,आओ चलें।

मूर्ख - चतुर

पहाड़ी से अब रमता जोगी और चिपकु लाल चले नीचे । संग अपने उत्साह से ओतप्रोत तरंगों को खींचे। हवाओं में गीत था। नदियों में संगीत था। मौसम खुशगवार क्यूँ था ? रमता जोगी ने नीचे घाटी की ओर देखते हुए कुछ गुनगुनाया, जो यूँ था –

ले रहे हैं आलसी बच्चे
बार बार जम्हाइयां
अकड़ अकड़ अंगड़ाईयाँ
आओ उनको चुस्त करते हैं

दिमागों में उनके विचारों की
भागती हैं बेतरतीब कारें
चलो ट्रैफिक कंट्रोलर बन
यातायात दुरुस्त करते हैं।

चलते चलते वे उस पर्वतीय शहर में प्रविष्ट हुए जहाँ लोग जल्दी उठा करते हैं। सवेरे सवेरे मंदिरों के आगे जुटा करते हैं। अब वे एक गली में थे। तभी एक मकान का द्वार खुला और एक महिला ने अपने घर के आगे आगे झाड़ू लगाया और उस कूड़े को सामने वाले पड़ोसी के द्वार के सामने खिसकाया। वह यह गीत भी गुनगुनाती जा रही थी – " कोई यहाँ गैर नहीं, हमें किसी से बैर नहीं।" यह देख के चिपकु लाल की आँखें आश्चर्य से फ़ैल गयीं। उसने जोगी की ओर देखा तो जोगी ने बरबस एक ज़ोरदार कहकहा लगाया।

तभी पिछली गली से एक बुजुर्ग आया और चूहेदानी का ढक्कन खोल के उसमें से चूहे को बाहर भगाया। चूहा एक घर में जल्दी से घुस गया। मंदिरों की घंटियां तेज़ हो चुकीं थीं। लोग ज़ोर शोर से भजन गा रहे थे। कुछ लोग नाचते गाते ठुमके भी लगा रहे थे। उधर गली

में जिस घर के सामने कूड़ा ला के गिराया गया था उस घर से एक महिला निकली और उसने वहां पड़ा कूड़ा देख के झाड़ू से उसे उसी घर की तरफ भेज दिया जहाँ से वह आया था।

उसी वक़्त कोई अपने घर से अभी अभी पकड़े गए चूहे को चूहेदानी में रख कर बाहर निकला और पिछली गली की ओर चल दिया। अब वो चूहा वहीं वापिस उसी घर में शायद पहुँच गया होगा जहाँ से वह आया था। ठीक वैसे ही जैसे वह कूड़ा अपने ओरिजिनल घर पहुँच चूका था। यह अजब, यह गज़ब, देख के चिपकु लाल की आँखें और भी ज्यादा फ़ैल गयीं। रमता जोगी की हंसी ही नहीं रुक रही थी। हंसी के ठहाकों से उसके गालों की मांसपेशियां भी अब दुःख रहीं थीं। चिपकु विस्मित था। इसमें हंसी की क्या बात है ? लोग स्वार्थी हैं। लोग आत्म केंद्रित हैं। कहें कुछ और करें कुछ – बस यही तो उनकी ख़ास बात है।

रमता जोगी ने कहा, " हंसी कभी कभी तब आती है जब हम किसी के बुद्धूपन को देखते हैं। ये सब लोग खुद को बहुत चालाक और बुद्धिमान समझते हैं इसलिए अपनी तकलीफ की टोपी किसी दूसरे के सिर पर रख देते हैं और वह अपनी टोपी किसी दूसरे के सिर पर रख देता है। और यह टोपियों की अदलाबदली का सिलसिला यूँ ही बदस्तूर चलता ही रहता है। यही देख देख के तो मैं हंसी में लोटपोट हो रहा हूँ।

फिर घूम फिर के वही टोपी उनके सिर पर वापिस लौट आती है। अगर यह टोपियों का लौटना शुरू में ही देख लेते तो किसी को अपनी टोपी पहनाने से बाज़ आ जाते। यही तो हंसी का कारण है। यदि मनुष्य परिणाम देख ले तो गलत कृत्य करे ही क्यों ? अगर किसी श्रृंखला के एक छोटे से टुकड़े को ही नहीं, बल्कि उसके अंतिम बिंदु को देखा होता, तो कोई भी, ऐसी मूर्खता क्यों करता ?"

रमता जोगी और चिपकु लाल आपस में बतियाते अब मंदिर की सीढ़ियों तक पहुँच चुके थे। माइक पर पंडित जी प्रवचन समाप्त कर रहे थे। तभी एक कुत्ता मंदिर की सीढ़ियों से ऊपर चढ़ा और पंडित जी के बगल में रखी मिठाई की पन्नी ले भागा। भक्त उस वक़्त यह उद्घोष कर रहे थे, "विश्व का कल्याण हो, प्राणियों में सद्भाव हो।"

तभी किसी ने कुत्ते को “आऊं आऊं” करते, दर्द से कराहते पंडित की चप्पल से मार खाते, देखा। भक्त लोग उस कुत्ते की पीड़ा पर मुस्कुरा रहे थे। कोई बोला, “ बेटा आऊं आऊं नहीं करना था। यहाँ आओगे और चोरी डकैती करोगे तो फिर आऊं आऊं का क्रंदन करते हुए, तबियत से पिटोगे ही न ?” यह सुनते ही जो भक्तजन अब तक मुस्कुरा रहे थे, वो भी ज़ोर से हंस पड़े। एक बोला, “समझ नहीं आया अभी प्रवचन में तो पंडित जी कह रहे थे कि किसी भी हालत में गुस्सा करना शोभा नहीं देता। तो अब शोभा दे रहा है क्या ? यह क्या बात हुई ?”

दूसरा बोला, “मुझे लगता है मुझे इतनी हंसी तो किसी कॉमेडी शो में नहीं आयी जितनी कुत्ते के पीछे अपनी धोती पकड़ के भागते और उसे पकड़ कर चप्पल से पीटते इन पंडित जी को देख के आयी है। हा, हा, जब पिट चूका, वह कुत्ता, उस मिठाई को वहीँ छोड़ के भागा, तो मुझे लगता है कि वह पंडित जी को यह कहते हुए रफूचक्कर हो गया कि लो इसे तुम ही खा लेना। शायद मुझ से ज्यादा तुम्हें ही इसकी ज़रूरत है। हा,हा, वह पिटने के बावजूद भी हंसी के मारे,जमीन पर उल्टा हो के, अपने पेट को दिखाता हुआ, कहीं पे लोटपोट हो रहा होगा।”

रमता जोगी ने चिपकु लाल से कहा, “ये लोग आम तौर पर विचारों द्वारा फन्नी सिचुएशन बना के हास्य पैदा करते हैं। वो हम भी करते हैं। लेकिन हमारा हास्य सम्पूर्ण पिक्चर देख के भी पैदा होता है जो सामान्य अवस्था में मानव नहीं देख सकता। उदाहरण के लिए छत पर बैठा व्यक्ति एक गली, जिसके अंत में तीव्र अँधा मोड़ है, में से शान से लहरा के चलते, ठुमकते, मटकते किसी मदमस्त इंसान को देखता है और उसे उस अंधे मोड़ के अंत पर एक सांड बैठा दिख रहा है जो मोड़ के कारण छिपा हुआ है। छत पर बैठे व्यक्ति को पता है कि आगे क्या हो सकता है, जो गली में चलते व्यक्ति को, सीमित दृष्टि सीमा होने के कारण बिल्कुल नहीं पता। तो छत पर बैठे व्यक्ति को एक हास्यास्पद परिस्थिति का पूर्वाभास हो जायेगा जो नीचे वाले लोगों को, किसी को न हो सकेगा।

सम्पूर्ण दृष्टि, ज्ञानी को संभावित खतरों से बचा सकती है और जो इस चेतावनी पर ध्यान न दे, ज्ञानी की बात पर कान न दे, तो ज्ञानी को एक हास्य परिदृश्य तो उपलब्ध हो ही जायेगा न ?”

चिपकु लाल उत्साह से नाच पड़ा। उसके मुंह से निकला, " अरे वाह ! बुद्धू बन जाना जहाँ खुद के लिए समस्याओं का कारण है, वही अन्य लोगों के लिए वह हंसी का मटेरियल भी है। बुद्धू वह हुआ जो पूरी पिक्चर नहीं देख रहा। वाह वाह ! क्या ज्ञान की बात है ? सिगरेट पी रहा है जो या दारु के जाम टकरा रहा है जो, वह एक सीमित दूरी तक ही तो देख रहा है न ? क्षणिक स्वाद , या किक ! उसी तरह जो भुक्खड़ है ,पेटू है , खाऊ है - ऐसा स्वाद लोलुप केवल जीभ की संवेदनाओं तक ही खुद को सीमित रखे रहता है ,आगे की पेट की जलन, गैस, पेट की अन्य गड़बड़ियां और मोटापा तथा शरीर के भीतरी अंगों की चीत्कार, उनकी कराहट, नहीं सुन रहा। वैसे ही अन्य इन्द्रियों के दास व्यक्ति का भी यही हाल है। सभी निकट दृष्टि दोष यानि मायोपिया से पीड़ित हैं। और मजे की बात यह है कि लोग सुख देने वाले उस सीमित दायरे से आगे देखना भी नहीं चाहते। जोगी जी, आज तो आपने हंसी हंसी में एक गंभीर सत्य के प्रति मेरी आँखें खोल दीं हैं।"

फिर जोगी और चिपकु हवाओं में अपने बाल लहराते हुए, झूम झूम के गाते हुए, वहां से चलते हुए क्षितिज़ पर ओझल हो गए -

बुद्धू समझतें हैं खुद को, चतुर
अपने हर कृत्य को सही मानते हैं
अपूर्ण दृष्टि होती है सदा ही भ्रामक
इस सत्य को वो नहीं जानते हैं

हर ग़लतफ़हमी का है एक मूल
कि देखी नहीं पिक्चर पूरी थी
सिर्फ इसीलिए होती है हर भूल
कि ध्यान की समग्रता अधूरी थी

लघु दृष्टि से होता है किसी से लगाव
लघु दृष्टि से ही जन्मते सारे मनमुटाव
दुर्बल ऐसे नेत्रों पर चश्में चढ़ाओ, चलें
आओ चलें, आओ चलें।

संवेदना और अनुशासन

रमता जोगी और चिपकु लाल अब उस मंदिर से आगे बढ़ गए और एक स्कूल की बिल्डिंग के समीप से गुजरने लगे। दोनों ने उस स्कूल की दीवार में बनी एक खिड़की से देखा - मास्टर जी बच्चों को पढ़ा रहे थे और बच्चे धमाचौकड़ी मचा रहे थे। बीच बीच में मास्टर जी उन्हें शांत रहने का निर्देश देते हुए दण्ड की धमकी भी दे रहे थे। लेकिन बच्चे कहाँ आसानी से मानते हैं ? कुछ बच्चों को मुर्गा बना दिया गया था और कुछ को क्लास से बाहर अपने हाथ ऊपर कर के खड़े रहने को कह दिया गया था।

चिपकु लाल ने रमता जोगी से पूछा, " जोगी जी महाराज, कृप्या यह बताएं अनुशासन भीतरी होना चाहिए या बाहरी ? अब देखो न ये बच्चे हैं, शरारती हैं, इनके भीतर से अनुशासन कहाँ से आये भला ? इनको तो बाहरी अनुशासन की आवश्यकता पड़नी ही पड़नी है। और प्रबुद्ध जन कहते हैं कि अनुशासन तो सिर्फ भीतरी ही कारगर है।"

रमता जोगी सड़क के किनारे बने एक मुंडेर पर जा बैठा। तभी एक मोटर बाइक लहराती हुई बड़ी तेज़ गति से वहां से गुजरी। जोगी ने चिपकु को कहा, "सुनो भई चिपकु लाल ! यह लहराती बाइक सवार क्या एक अनुशासित सवार है ? इसके किसी को कुचलने या खुद ही चोट खाने की प्रबल सम्भावना है जो कि गैरजिम्मेदाराना हरकत है। आप यह नहीं कह सकते कि यह मेरी फ्रीडम है कि मैं कुछ भी करू, कैसे भी करूँ। जो कृत्य अन्यों को नुकसान पहुंचा सकते हों ऐसे कृत्य आज़ादी की परिभाषा में तो कतई नहीं आ सकते।"

चिपकु लाल ने हामी भरते हुए कहा, "बिल्कुल सही फ़रमाया आपने। दुनिया को क्या मस्त आईना दिखाया आपने ?"

रमता जोगी ने आगे बोलना ज़ारी रखा, " तो दूसरों के प्रति संवेदना होना ही जिम्मेदारी है और ऐसी जिम्मेदारी की मनोवृत्ति से किये गए काम ही अनुशासन हैं। ये अनुशासन किसी इंसान द्वारा घड़े गए बाहरी और कृत्रिम अनुशासन नहीं हैं। इनकी उत्पत्ति संवेदना से होती

है, सजगता से होती है। यह आत्म - अनुशासन ही सीखने का प्रथम बिंदु हैं। लेकिन इसमें समाया ज्ञान का अनंत सिंधु हैं।"

तभी वहां से एक धोबी अपने गधे को खींच के एक तरफ ले के जाता दिखाई दिया। गधा ऐसा प्राणी है वो हर काम बस अपनी मर्जी से ही करता है। उस पर कोई बाहरी ज़ोर ज़बरदस्ती नहीं चलती। रस्सी खींच खींच के और अपनी लाठी से गधे को पीट पीट के धोबी थक चुका था। ढेरों गालियां दे दे के अब वह खुद पक चुका था। वह गधा और धोबी दोनों रमता जोगी के सामने ही सड़क पर बैठ गए। निढाल। खस्ता - हाल।

रमता जोगी ने गधे की गर्दन को सहलाया और उसके सिर पर अपना हाथ फेरा। गधे के विद्रोही मन को एक सुकून ने घेरा। कुछ पलों में ही वह उठा और धोबी के साथ साथ चलने लगा।

रमता जोगी के मुख से ज्ञान प्रवाह, शब्दों में बदल कर, मचल मचल कर, फिर निकलने लगा, "बाह्य अनुशासन तो थोपा गया अनुशासन होता है जो दूरगामी और अधिक प्रभावी नहीं हो सकता। बाह्य अनुशासन या जबरदस्तियाँ तो सिर्फ ढोंग या विद्रोह को ही जन्म दे सकते हैं। आंतरिक अनुशासन एक सतत, स्वचालित, स्वप्रेरित, प्रक्रिया है। आंतरिक अनुशासन में कथनी और करनी में कोई भेद नहीं होता जो कि मज़बूर करने वाले बाह्य अनुशासन में होता है। इस दुनिया में सब तरफ अधिकतर बाह्य अनुशासन का बोलबाला है और उसका कारण भी है।

कारण यह कि अधिकतर लोग यांत्रिक मनोवृत्ति वाले, अचेत से, अर्धसुप्त से, जी रहे हैं। जो सजग नहीं है, ऐसा मूर्छित व्यक्ति भीतरी अनुशासन का अनुपालन करे यह हो नहीं सकता। ऐसे उद्दंडों को बाहर से, कठोर नियमों से नियमित किया जाता है और कोई उपाय नहीं। क्रोध से उबलते, आवेगों से लगातार आंदोलित होते रहने वाले, असन्तुलित पागलों से यह आशा नहीं की जा सकती कि उनमें आंतरिक बुद्धि की सत्ता चलेगी, कि वे लोग अपनी भीतरी लड़ाई स्वयं जीत लेंगें। इसकी कोई दूर दूर तक कोई संभावना नहीं होती। इसीलिए ऐसी जनता को सदियों से बाहरी शासन से अनुशासित किया ही जाता रहा है।"

चिपकु लाल को अब प्यास लग आयी और वह इधर उधर कोई जल का स्त्रोत ढूंढने लगा। तभी उसकी नज़र सड़क के किनारे लगे एक हैंडपम्प पर पड़ी। वह एक पुराना हैंडपंप था जिसे शायद अब अधिक लोग उपयोग में न लाते होंगें । चिपकु ने ज़ोर लगा के किसी तरह उसे चलाया और अपनी प्यास बुझाई। बहुत दिनों से प्रयोग में न आने के कारण वह हैंडपम्प थोड़ा जाम था। चिपकु खुश था कि उसे किसी की हेल्प नहीं लेनी पड़ी और थोड़े प्रयास से वह इसे चला कर, स्वयं की प्यास बुझाने में सफल हो गया था।

रमता जोगी ने उसके इस कृत्य को देख के आगे कहना शुरू किया, "चिपकु लाल जी आपको यह बात समझनी है कि सीखने की सच्ची लगन स्वत: ही आत्म - अनुशासन ले आती है। इसमें फिर किसी बाहरी अनुशासन की आवश्यकता नहीं पड़ती। यह है सेल्फ़ हेल्प। स्कूलों में यह मान लिया जाता है कि बच्चों में सीखने की सच्ची ललक से ज्यादा इधर उधर की शरारतों में ही लगे रहने की प्रवृत्ति होती है। अत: उन्हें बाहरी तौर पर अनुशसित किया जाना ही अभीष्ट है। अभी वो आत्म अनुशासित नहीं होंगें।

मानसिक उन्नति हेतु आत्म - अनुशासन ही सर्वोपरि है जो ध्यान की अवस्था में, साक्षी भाव से और सजगता से आता है। एक संवेदनशील मन सदा अनुशासन में ही है ,ऐसा मानना चाहिए क्योंकि उसका मन प्रेम से भरा है और प्रेम किसी को कष्ट दे नहीं सकता। यहाँ तक कि यदि वह स्वयं किसी से कष्ट भी पा रहा हो, तो भी वह किसी के प्रति द्वेष और क्रोध से नहीं भर सकता।"

दोनों अब चलते हुए सड़क के किनारे खड़े एक ट्रक के पास पहुंचे, जिसके इंजिन में कोई टेक्निकल फॉल्ट आया हुआ था, जिसे एक मैकेनिक ठीक कर रहा था। अचानक उसने सड़क पर पड़ी एक ईंट को देखा। वह मैकेनिक ट्रक से तुरंत उतरा और उस ईंट को वहां से उठा के सड़क के किनारे रख आया।

ट्रक ड्राइवर ने उसे शिकायती लहज़े में कहा, "अरे ईंट वींट तो बाद में उठाता पहले मेरे ट्रक को तो ठीक करता।" मैकेनिक बोला, "सुन ओए काके ! बच्चों सा न बन शोर मचा के। ट्रक तो मैं रिपेयर कर ही रहा हूँ। कोई तेज़ गाडी इस से टकरा के पलट जाती तो ? सबको अपनी पड़ी है। ऐसा न कर बेबी । औरों के लिए भी, सोच लिया कर कभी।"

रमता जोगी ने उस मैकेनिक की ओर इशारा करते हुए आगे बोलना शुरू किया, " हमारे भीतर की चेतना ,हमारे भीतर की संवेदना, ही प्रेम बन के प्रकट होती है। ऐसा व्यक्ति दर्पण की भांति सदा वर्तमान, स्वच्छ और निर्मल होता है। वह लापरवाह नहीं हो सकता क्योंकि लापरवाही भी अनुशासनहीनता है। इससे उसे स्वयं को अथवा अन्य को कष्ट हो सकता है। इस मैकेनिक को इसकी परवाह है कि कोई दूसरा चोट न खा ले। यही संवेदना है, करुणा है। प्रेम में स्वत: अनुशासन निहित होता है। संक्षेप में सीखने की प्रक्रिया ही अनुशासन है। सीखना होता है जानना, किसी चीज़ के मर्म को जानना , किसी भी वस्तु या प्रक्रिया की तह तक जाना। और सबकी तह में एक अभेद सत्ता है। इस एकत्व का दूसरा नाम प्रेम है। तो अनुशासन प्रेम का मार्ग है और यह केवल भीतरी ही हो सकता है। बाहरी अनुशासन वैसा ही व्यर्थ है जैसा दिखावे का बाहरी प्रेम।

तो प्रेम ही समस्त सृष्टि में दिखने वाली व्यवस्था का मूल है। प्रेम ही व्यवस्था है। प्रेम ही अनुशासन है। प्रेम ही कथनी और करनी के भेद का अंत है। यही अनादि और अनंत है। जो प्रेम में हैं वो भक्त हैं ,वो संत हैं।

जो अनुशासित नहीं वो प्रकृति द्वारा प्रस्तुत अवसरों के प्रवाह से भी न सिंचित होंगें । जो सदा हड़बड़ी में हैं, चीज़ों से या लोगों की ईगो से टकराते रहते हैं, वे बड़ी गड़बड़ी में हैं। ऐसी अस्त व्यस्त ज़िन्दगी के फलस्वरुप वे अनुशासन और बोध द्वारा अनेकों समस्याओं के समाधान होने की सम्भावना से भी वंचित रहेंगें।

अनुशासन से उत्पन्न प्रेम ही मोक्ष है। प्रेम ही जगत की व्यवस्था की परोक्ष अनुभूति है और दिव्य आयामों की अपरोक्ष अनुभूति है। "मैं" का लोप ही प्रेम है और वही परम प्रशांति और आनंद की प्राप्ति के लिए ध्यान मार्ग है। ध्यान ही अनुशासन है।अब तक जो विस्तार से बताया गया वह ठीक से समझ गए, तो परम मन्त्र है अन्यथा थोथा भाषण है।"

उसी वक़्त हल्की वर्षा शुरू हो गयी। काले बादल नीचे घाटी में उतर आये थे। वर्षा कण केले के बड़े बड़े पत्तों पर गिर के मोतियों की तरह गोल हो कर नीचे गिर रहे थे। सड़क के किनारे बनी दुकानों की टीन की, काली हो गयी छतें, अब वर्षा कणों द्वारा धुलना शुरू हो गयीं थीं। उन छतों से नीचे गिरती पानी की धारें अब इकठ्ठा हो के सड़क के साथ साथ चलने वाली एक छोटी जलधार में बदल चुकीं थीं। हवा में भी फुहार थी जो रमता जोगी और

चिपकु लाल के शरीरों को एक ठंडी सिहरन दे रही थी। यह फुहार आनंद की अनुभूति भी थी और आने वाले हाड कंपाने वाले पलों की पूर्वसूचना के फलस्वरूप डर की सिहरन भी।

रमता जोगी के मुंह से यह गीत निकला -

आ सकती है अगले पल परेशानी कोई
यह सोच के वर्तमान को क्या न जियें हम

काँप रहे हैं ठण्ड से इस तूफानी बारिश में तो
क्या प्यासे रहें, और पानी न पीएं हम

तूफानों से बड़े हैं हमारे अडिग हौसले
जिनसे होते हैं रवां हमारे मुख्य फैसले

आओ चलें ,आओ चलें
आओ चलें ,आओ चलें।

हरा तोता

सड़क के किनारे पहाड़ी से दायीं ओर नीचे संगमरमर की सीढ़ियां बनीं थीं जो एक खूबसूरत पार्क तक जातीं थीं। रमता जोगी और चिपकु लाल उसी पार्क की ओर चल पड़े। वहां एक बड़े से पेड़ के नीचे एक गोल घेरे में कुछ बूढ़े बुजुर्ग बैठे हुए थे और किसी गंभीर चर्चा में निमग्न थे। पेड़ पीले फूलों से लदा हुआ था और उसकी हरी पत्तियां ऐसे चमक रहीं थीं जैसे उन पर किसी ने तेल चुपट दिया हो ।

रमता जोगी और चिपकु लाल भी उसी गोष्ठी में जा बैठे। किसी ने भी ध्यान न दिया। ध्यान तो शायद किसी ने भी उस पेड़ के चमकीले हरे पत्तों और सोने जैसे पीले फूलों पर भी नहीं दिया था। पेड़ पर बैठे एक हरे तोते पर, जो उन हरे पत्तों में मुश्किल से ही दिख सकता था, किसी की नज़र शायद ही पड़ी हो। जो विचार की किसी तंग गली में उलझे हों वे भला आसपास क्या ही देखेंगें ? संकीर्णता विशालता को नहीं जान सकती। शब्दों की संकीर्णता उसके प्रति कैसे सजग होगी जिसका आयाम ही असीम है ?

एक वक्ता शायद उनका नेता था, सम्मानीय था क्योंकि उसे औरों से ज्यादा धार्मिक ग्रंथों का ज्ञान था। सब अभिभूत हो के उसे सुन रहे थे। वह गीता के उपदेशों पर अपनी व्याख्या कर रहा था। उसे उसका कोई प्रत्यक्ष अनुभव न था जिसकी वह चर्चा कर रहा था। दूसरों के, विशेषज्ञों के विचार और स्पष्टीकरण ही उसके मन में भरे हुए थे जिन्हें वह यंत्रवत बस ब्रॉडकास्ट कर रहा था। पेड़ों पर बैठे हरे तोतों से यह कुछ अलग न था क्योंकि इसने धर्म ग्रंथों का बस तोता - रटंत ही तो किया था। इसकी हालत उस गधे की तरह थी जो शास्त्रों को अपनी पीठ पे लादे इधर उधर घूम रहा है। शास्त्र तो उसके लिए बोझ मात्र हैं। क्योंकि उसने उनको कभी पढ़ना तो है नहीं, बस ढोना है। इस व्यक्ति ने उन्हें महज पढ़ा है लेकिन उन्हें अनुभूत नहीं किया। वह तो एक ऐसी कलम की तरह है जिसे आध्यात्मिक सत्यों को कागज़ पर उतारने का काम मिला हुआ है, लेकिन कलम खुद नहीं जानती कि वह लिख क्या रही है ?

उस वक्ता ने कहा, “गीता का सन्देश है - निष्काम कर्मयोग और स्थितप्रज्ञ रहना।”

तभी उसकी दृष्टि रमता जोगी और चिपकु लाल पर पड़ी जो तब तक उठ चुके थे और वहां से जा रहे थे। उसने उनको प्रणाम किया और गीता का कोई ऐसा गुह्य सन्देश वहां उपस्थित जिज्ञासुओं को उद्घाटित करने का अनुरोध किया जिसके बारे में बड़े बड़े विद्वान भी अभी खामोश हों।

रमता जोगी ने कहा, “भगवद्गीता का मूल सन्देश ही है - आओ चलें। जब द्वंद्व हो, सब रास्ते बंद हों, करना पड़ रहा हो वो, जो नापसंद हो ,तमस का सिक्का बुलंद हो तो इन सब व्याधियों का सिर्फ एक ही निदान है - आओ चलें। अर्जुन मोह ग्रस्त है। उसके किंकर्तव्यविमूढ़ हो के, हौसले पस्त हैं। अपने पूजनीय और सम्बन्धियों पर कैसे घात करूँ? ऐसी दुविधाओं से वह त्रस्त है। तब श्री कृष्ण क्या कहते हैं ? अपना कर्म करो। वही तो प्रवाह है। रुकना नहीं है किसी भी भौतिक या मानसिक बाधा से। बस आगे बढ़ते जाना है। मामनुस्मर युध्य च।

तमस रुकना है। रजोगुण सिर्फ क्रिया है। लेकिन इसमें बोध की प्रेरणा नहीं है। सत्व या सतोगुण है - वास्तविक क्रिया। चैतन्य से उद्भूत क्रिया ही श्रेष्ठ है क्योंकि इसमें पूर्वाग्रह नहीं, इसमें दुर्भावनाओं का दुराग्रह नहीं। यही है सरल शब्दों में - आओ चलें।

जब आप मोहग्रस्त हैं और भावनाओं के भूचाल से त्रस्त हैं तो स्थितप्रज्ञ कैसे हो सकते हैं? जो कहीं पूर्वाग्रह में अटका नहीं, भावनाओं में भटका नहीं, वही स्थितप्रज्ञ है। जो नित प्रवाह में है, जो परम चेतना के इशारों पर कर्मरत है, उनकी सलाह में है, तो वो स्थितप्रज्ञ है। रुक जाना ही चुक जाना है। तमस मृत्यु है, जीवन प्रवाह है। इसलिए वेद भी और गीता भी, सिर्फ एक ही सन्देश देते हैं - चरैवेति, चरैवेति। अर्थात चलते रहो ,चलते रहो। किसी मोह से रुको नहीं। अतीत की गलियों में गोल गोल घूमते ही न रहो, भविष्य की कल्पनाओं में ही सिर्फ खोये न रहो। वर्तमान में रहो। वर्तमान ही नित्य है , सनातन है, इसी में बहो। ध्यान रहे, शुष्क किताबी ज्ञान से यह बहाव संभव नहीं है।

इस सृष्टि में कुछ भी स्थिर नहीं है। जीवन नाम है चलने का। नियति और सृष्टि के साथ साथ निरंतर परवर्तन का ,बदलने का। रोग है रुकाव। मोह है झुकाव। जीवन का प्रवाह कभी रुकता नहीं है। भूमि में दबा हुआ भी बीज प्रस्फुटित करता है नयी कोंपलें। समझ आ गया हो तो हम चलें ?

आओ चलें,आओ चलें

मेरे संग संग गाओ चलें

जो रोके हमें अतीत की बेड़ियाँ

तो उसे उड़ाएं चलें

आओ चलें ,आओ चलें

जब संदेह गूढ़ हो

हम किंकर्तव्यविमूढ़ हों

शंकाओं को भगाएं चलें

आओ चलें ,आओ चलें

आओ चलें ,आओ चलें।"

यह गाते हुए रमता जोगी और चिपकु लाल उस पार्क से बाहर निकल गए। वह गीता का व्याख्याकार वहीं ख़ामोशी से बैठा हुआ था। उसका मुंह बंद था लेकिन उसके मन में अब भी यह सवाल कौंधे जा रहा था कि यदि मुख्य मुद्दा अनुभूति है तो क्या वह अचानक उद्भूत होगी बिना शब्दों के या शब्द भी महत्वपूर्ण हैं ?

वह कश्मक़श में था। इतने जतन से एकत्रित किये हुए अपने ज्ञान के तथाकथित भंडार के वश में था। अब इसे कैसे त्यागूँ ,कैसे नकारूं ? वर्षों की मेहनत पर कैसे झाड़ू मारूं ?

पेड़ पर बैठा हरा तोता बोला, चबाते हुए एक आमला, "क्लियर है मुझे तो यह सारा मामला। इस शब्द्जीवी के लिए केवल शब्दज्ञान काम का है। असली तोता तो यही है, आदमी सिर्फ़ नाम का है।"

कबूतर

खुद को समझे हुए बहुत बड़ा ज्ञानी, बरगद के पेड़ के नीचे बैठा था एक ध्यानी। लम्बी घनी धूर धूसरित जटाएं उसके कंधे पर थीं। एक बहेलिया भी उसके सामने से बार बार गुजर रहा था। इधर से उधर ,उधर से इधर। उसके हाथों में कबूतरों को पकड़ने वाला जाल था। उसकी नज़र ध्यानी पर नहीं थी, धंधे पर थी। बरगद के शाखाओं पर कबूतर थे। सब बहेलिये के प्रति चौकस थे। लेकिन वो ध्यानी के भी फोकस थे।

ध्यानी परेशान था। इन विघ्नों से कैसे छुटकारा पाएं ,ऐसी किसी हल से वह अनजान था। वह बीच बीच में अपने नेत्र खोलता और फिर मूँद लेता। सामने उगे एक फलों से भरे पेड़ से एक पका हुआ फल टपका। ध्यानी की चेतना ने उसे अपने कानों से लपका। एक आँख खोल के उसने तिरछी नज़र से देखा। बहेलिए उसे खा रहा था।

ध्यानी ने भी कुछ दिनों से कुछ खाया न था। इसलिए उसके मन में तृष्णा जागी और उसने महसूस किया कि उसके मुंह में पानी आ रहा था। लेकिन वह ध्यानी था। वह तो ज्ञानी था। मन को दमन करना है। इच्छा को, चाहे वह मज़बूरी ही क्यों न हो, उसे दूर से ही नमन करना है। उसने अपनी आँखें कस के बंद कर लीं। मन का भी दम घोंट दिया। तभी कुछ गर्म गर्म उस के माथे पर गिरा, क्रोधित हो के उसने यह नोट किया।

वह झुंझलाया। अपने माथे से कबूतर की बीठ को पोंछा और उन कबूतरों को वहां से पत्थर मार मार भगाया। फिर वह चेतन हुआ कि वह तो ज्ञानी था। वह तो ध्यानी था। उसे यह सब नहीं करना था। उसे तो सिर्फ साक्षी भाव से दृष्टिपात करना था। आज वह फिर इसमें फेल हो गया। जाने कितनी ही बार हुआ था ? वह निराश हो रहा था ,असफलताओं से हताश हो रहा था। तभी उसी समय किसी की पदचाप उसे सुनाई दी। रमता जोगी और चिपकु राम उसकी ओर आते दिखाई दिए। वह अपने आसान से उठ खड़ा हुआ।

ध्यानी ने हाथ जोड़ के रमता जोगी से कहा, “प्रभु ! मुझसे नहीं हो रहा। मैं प्रत्येक साधना में निरंतर असफल हो रहा हूँ। मेरा क्या होगा ?”

तभी चिपकु लाल बीच में ही बोल पड़ा, “आओ चलें।”

ध्यानी घबरा गया और रमता जोगी के चरणों में गिर के बोला, “अरे नहीं। मुझसे क्या अपराध हो गया ? आप मेरा उद्धार किये बगैर कैसे जा रहें हैं प्रभु ?”

रमता जोगी हंस पड़ा। उसने उसको उठा कर अपने सीने से लगाया और कहा, “तुम्हारे मर्ज़ की दवा यही है - आओ चलें। तुम रुके हुए हो। ग्रन्थ पढ़ पढ़ के अटके हुए हो। नाना प्रकार के मार्गदर्शनों द्वारा भटके हुए हो। क्योंकि इस यात्रा का मार्ग दर्शन बाहर से नहीं हो सकता। यह तो सिर्फ तुम्हारी यात्रा है, तुम्हारे भीतर की यात्रा। इसमें कोई गाइड नहीं हो सकता ,कोई निर्देशक नहीं हो सकता।

याद रखो। बाहर की यात्रा “जानने” की प्रक्रिया है और भीतर की यात्रा “खोज” की। खोज तो स्वयं ही होती है और स्वयं की खोज तो बिल्कुल सौ प्रतिशत स्वयं ही करनी होती है।

एक रहस्य की बात बताऊँ ! भीतर की यात्रा चूँकि मन के ऊपर काम करने की होती है इसलिए मन के द्वारा की गयी मदद इसमें बिल्कुल वर्जित है। योजना बना के या कठोर निश्चय कर के तुम मन की विकृतियां - जैसे कि इच्छा, भय, क्रोध ,द्वेष इत्यादि दूर नहीं कर सकते। इन्हें केवल इनको समझ के, इनको देख के ही दूर कर सकते हो। इसीलिए आध्यात्मिकता का अर्थ दर्शन ही है।

मन्त्रों को तोता रटन्त करने से कोई लाभ कैसे होगा ? रोटी ,रोटी कहते रहने से ही क्या रोटी मुंह में आ जायेगी ? कहने से कुछ न होगा, कर्म करना होगा और यहाँ कर्म है अपने मन और उसकी हरकतों के प्रति जागृति। तुम वेद पढ़ के बस मन्त्र दोहरा रहे हो, “चरैवेति, चरैवेति” जिसका अर्थ है - रुको नहीं ,बस चलते रहो। लेकिन तुम तो रुके हुए हो। बस मुंह से बोल रहे हो। ये जो कबूतर तुम्हारे ऊपर पेड़ पर बैठे हैं, ये इस बहेलिये के जाल में ज़रूर फंस जाएंगे, यदि खाली मुंह से ही बोलते रहेंगे कि जाल के भीतर रखा दाना नहीं चुगना है और फिर जा के दाना चुगने भी लग जाएँ।

हम भी यही कहते हैं - आओ चलें ,आओ चलें। यही उसी वैदिक मन्त्र का वर्तमान समय के लिए सरल अनुवाद है। सारी समस्याएं ही प्रवाह को अक्षुण्ण न बनाये रखने के परिणाम

स्वरुप है। आध्यात्मिक जीवन समझ का परिणाम है, बाहरी साधनाओं या विचार पद्धतियों का ऑटोमैटिक परिणाम नहीं।

शब्जालं महारण्यं - अर्थात शब्दों का जाल एक बड़े जंगल की तरह है। उसी में भटकते रहोगे। जब तक जागृति की चेतना की लहरों में नहीं बहोगे। जब तक यह गीत द्वारा नहीं कहोगे —

"आओ चलें ,आओ चलें
ध्यानियों को समझाओ, चलें

केवल कहने मात्र से ही
कोई महान नहीं होता

संकरी विचार वीथियों में फंस
कोई ध्यान नहीं होता

प्रतिक्रिया रहितता आती है
प्रतिक्रिया - कर्त्ता को समझ के

मन के अदृश्य कोनों का
जब तक संज्ञान नहीं होता।

चरैवेति चरैवेति, गाओ चलें
आओ चलें, आओ चलें।"

यह गीत गाते हुए, रमता जोगी और चिपकु लाल वहां से पहाड़ी मार्ग से ऊपर जाते हुए, वन में अदृश्य हो गए। बहेलिये ने देखा कि ध्यानी भी वही गीत गाते हुए उनके पीछे पीछे चलता जा रहा है। और कबूतरों ने देखा कि वह बहेलिया अब उसी बरगद के पेड़ के नीचे पालथी

मार के बैठ चुका था। उसकी आँखें बंद थीं। बीच बीच में वह तिरछी नज़र से एक आँख खोल के शाखा पर बैठे हुए किसी कबूतर को देख लेता था। उसकी तो आँखें बंद थीं पर कबूतरों की आँखें अब खुल चुकीं थीं।

बर्फीली चोटी

रमता जोगी और चिपकु लाल एक ऊँचे पर्वत पर थे, जिसकी बर्फ़ से लदी चोटियां उगते सूरज की स्वर्णिम लालिमा में चमक रहीं थीं। थोड़ा नीचे एक पहाड़ी नदी ग्लेशियर से बन रही थी। रमता जोगी ने नीचे उतर कर उस ग्लेशियर की बर्फ की कुछ पाउडर नुमा बर्फ को उठाया और चिपकु लाल से उसे दिखाते हुए पूछा, " बताओ इस पिघली बर्फ का पानी में रूपांतरण का क्या महत्व है ?"

चिपकु ने तुरंत उत्तर दिया, "अब हम इसे पी सकते हैं। यह हमारी प्यास बुझा सकती है क्योंकि अब यह बर्फ तरल हो के पानी बन गयी है। बर्फ के रूप में तो यह हमारी प्यास बुझा नहीं सकती। यही इसका महत्त्व है।"

रमता जोगी ने उत्साह से कहा, "यह तरल हो गयी है क्योंकि यह सरल हो गयी है। सरलता ही विनम्रता है। कठोर गर्वीली चोटी पर ज़मी हुई बर्फ आत्म मुग्ध वस्तु है जो किसी के क्या ही काम आएगी ? वह सिर्फ वाहवाही लूटेगी पर्वतारोहियों और प्रकृति - प्रेमियों की। किसी की ज़रूरत में वह काम नहीं आने वाली।"

चिपकु लाल ने उस शानदार बर्फीली चोटी को देखते हुए प्रश्न किया, " तो जोगी जी, बर्फ चोटी पर चिपकती ही क्यों है जब उसे वहां से एक दिन जाना ही है ? यह प्रसिद्धि और पहचान तो क्षणिक है, फिर आगे का सफर तो सामान्य नदी के प्रवाह में बह जाना है, फिर से अनजान हो जाना है ?"

रमता जोगी ने एक शिलाखंड पर आसन जमाया और चिपकु को समझाया, " वह चोटी से चिपकी है, जो उसकी एक प्रकार की उपलब्धि है। चट्टान से उसे मोह है क्योंकि वह उसका आधार है ,उसकी सुरक्षा है। फिर वह ज्यों ही जानेगी कि वह तो अनश्वर है क्योंकि जल बन के वह अनंत सागर में ही जायेगी जहाँ से वह आयी थी और जो वास्तव में उसी का स्वरुप है ,वह और सागर अद्वैत हैं, तो उसका मोह और भय जाता रहेगा। इसी का नाम ज्ञान है। यही तो परम आध्यात्मिक उत्थान है। और इसके साथ भी यही हुआ है - पहले वह थोड़ी

लचीली हुई। उसकी चट्टानों से पकड़ ढीली हुई। वह बहती बर्फ - फिसलती हुई, चट्टानों की कठोरता से दूर निकलती हुई, अब जल बन रही है। पूरी तरह तरल बन रही है। पूरी तरह सरल बन रही है।"

चिपकु लाल भी उसी शिलाखंड पर आ बैठा। फिर कुछ सोचते हुए उस ने पूछा, "सरलता का अर्थ यही तो है न - सादा जीवन उच्च विचार ? कम से कम वस्तुओं का संग्रह रखना ? ज्यादा तड़क भड़क न रखना ?"

रमता जोगी ने जवाब दिया, " सरलता कम वस्तुओं का जमावड़ा नहीं अपितु बह सकने की कला का नाम है, प्रवाहित और द्रवित होने की खूबी है। सरलता प्राणदायिनी बन जाती है, तरलता प्राणदायिनी बन जाती है। मेधा तरल रूप से प्रवाहित होती है। जो मेधा की तरलता यानी सतत प्रवाह में रहते हैं वही मानसिक और व्यवहारिक रूप से सरल भी हो जाते हैं। कोई व्यक्ति दो चार कपड़े ही अपने कपबोर्ड में रखे और अन्य घरेलु सामान भी कम से कम रखे और सोचे कि वह सरल जीवन जी रहा है और वह स्वयं भी एक सरल व्यक्ति है, तो वह भ्रम में ही जी रहा है।"

फिर रमता जोगी ने उठ कर उस पहाड़ी नदी की जो छोटी सी धारा बह रही थी उसमें अपने हाथ डुबो दिए और उस जल की हाड कंपा देने वाली ठंडक का अनुभव किया। अब वह यह जांचना चाहता था कि इस तीव्र ठंडक के विरुद्ध उसकी देह कितना प्रतिरोध करती है अथवा करती भी है या नहीं ? फिर उसने वहीं बैठे बैठे अपनी गर्दन पीछे मोड़ी और चिपकु लाल से यह कहा, " सरलता अभावों से आती तो सारे गरीब लोग सरल होते। सरल वह है जो चैतन्य - बोध के प्रवाह में हर पल रहने के कारण अनावश्यक बहस नहीं करता, अकारण विरोध नहीं करता, बिना सोचे समझे तुरंत प्रतिक्रिया नहीं करता। जो सहज ही किसी भी बात पर विश्वास कर ले और फिर उससे अडिगता से चिपक जाए तो वह सरल तो नहीं कहला सकता। हाँ, नादान या चिपकु ज़रूर कहला सकता है। चिपकु इसलिए क्योंकि वह अपने द्वारा श्रेष्ठ ठहरा दिए गए निष्कर्षों से बुरी तरह चिपका रहता है जैसे सामने की बर्फीली चोटी पर बर्फ की मोटी चादर चट्टानों से चिपकी हुई है।"

फिर रमता जोगी ने उस जलधार से ऊपर निकली एक चट्टान को अपने हाथ से ठोका। फिर उसने चिपकु को दिखाते हुए पानी को एक चपत लगाई और हँसते हुए चिपकु लाल को कहा, "देखा तुमने ! चोट सिर्फ बर्फ को, किसी ठोस वस्तु को, सिर्फ मोहग्रस्त को, ही लग सकती है। पानी को नहीं। क्योंकि जो बहता है वह निष्कर्षों की छवियों या छवियों के निष्कर्षों से दूर ही रहता है इसलिए कभी चोटिल नहीं होता, कभी हर्ट नहीं होता। प्रवाह में कोई भी ठोस छवि बन भी नहीं सकती।"

चिपकु लाल ने असहज होते हुए कहा, " यह क्या बात हुई ? आपने मेरे नाम का ज़िक्र क्यों किया ? मेरा उदहारण क्यों दिया ? मैं सरल नहीं क्या ? मैं तो दो जोड़ी वस्त्रों में ही गुज़ारा करता हूँ और आपकी बातें बिना विरोध सुनता हूँ ?"

रमता जोगी ने प्रेम से चिपकु लाल को पुचकारा और कहा, " क्या आपको अपने नाम का ज़िक्र होने से, आपको भी लपेटे में लेने से, ठेस तो नहीं लगी ? लगी न ? यदि आप का हृदय किसी भी बात से, इशारे से, भाव - भंगिमा से घायल हो सकता है तो आप चिपकु जी, सरल व्यक्ति तो हर्गिज़ नहीं कहला सकते। शिशु सरल होते हैं क्योंकि वे घायल नहीं होते इस अर्थ में कि वो मानसिक पीड़ा के पल भविष्य में उठा नहीं ले जाते, वे वर्तमान में रहते हैं और जो वर्तमान में सम्पूर्णता से रह पाए वो पुराने, दर्द के अफ़साने ,कैसे याद रखेगा ? बुरा मानना, आपकी सूक्ष्म सत्ता का नहीं, आपके द्वारा खुद घढ़ी हुई छवि का काम है। छवि बनती है जीवन नदी के प्रवाह के अवशेषों से जैसे बालू बनती है नदी के प्रवाह के तलछट में बच रहे शिला चूर्ण से। जिसकी कोई छवि है और उस छवि से मोह है, तो वह प्रवाह में नहीं है और जो प्रवाह में नहीं है वह सरल नहीं है, क्योंकि वह तरल नहीं है। छवि सॉलिड रचना है।

जो सरल है वह तरल है इसलिए द्रवित भी हो जाता है। द्रवित होने का अर्थ है संवेदनशील हो जाना। जो दूसरों के दुःख में दुःखी है ,वह संवेदनशील है। जो दूसरे की बात समझे वह संवेदनशील है। जो दूसरे को कष्ट न दे वह संवेदनशील है। जो प्रेम में है वह संवेदनशील है। प्रेम ही सरलता है। प्रेम ही तरलता है। क्योंकि प्रेम में आप अपने निष्कर्षों और पूर्वाग्रहों पर अडिग नहीं रह सकते।

भक्ति ही सरलता है। क्योंकि बिना सरलता के आप भक्ति भी नहीं कर सकते। यदि आपका हृदय दर्पण की तरह है, जो सदा वर्तमान में रहता है, तो आप सरल हैं। क्योंकि कोई भी अतीत की धूल आपके प्रतिबिम्ब दिखाने के कौशल को धुंधला नहीं कर सकती।

जीवन सदा लचीलेपन में ही हो सकता है। जीवित कोशिकाओं को हर हाल में लचीला होना होता है यह बात जीवविज्ञान के विद्यार्थियों को भलीभांति पता होगी। अडिगता ही अकड़ है जो हमारे शरीर में रोग पैदा करती है और मानसिक अकड़ पारिवारिक और सामाजिक क्षेत्र में भी उसी प्रकार विवाद और समस्याएं पैदा करती है।"

यह कहते हुए रमता जोगी ने चिपकु लाल को उठ चलने का इशारा किया। दोनों अब इंसानों की बस्ती की ओर जा रहे थे। उन सब के साथ उन्हें बहुत कुछ शेयर करना था, सिखाना था। उनकी चाल में फुर्ती और होंठों पर गाना था। कोई सुने या न सुने उन्हें कोई फर्क न पड़ने वाला था।

पत्ते जो निर्मोही हो चुके
हवा के संग वो बह जाएंगे
जो बंधे हैं किसी मोह -पाश में
वो तो वहीं रह जाएंगे

जिन नावों की पालें खुल चुकीं
सिर्फ वो ही आगे बढ़ पाएँगी
जो हैं अपने में ही संकुचित,वे
प्रवाह विरुद्ध वहीं अड़ जाएँगीं

तो इसमें हवा का पक्षपात कहाँ
कौन सी अन्यायपूर्ण नियति है
अपने साथ उड़ चलने को
हवा कब निमंत्रण देती है ?

खुद की बनायीं बेड़ियों से
खुद को ही छुड़ाओ, चलें
मोह रात्रि में दीप जलाओ, चलें
आओ चलें ,आओ चलें।

अंत का डर

पर्वत की चोटी से लेकर दूर घाटियों तक बर्फ की मोटी चादर बिछी थी। पेड़ और मकानों की छतें बर्फ के मोटे लबादों तले दबी हुईं थीं। सर्वत्र सफ़ेद रंग था। धरती और आकाश सब सफ़ेद थे। यह असाधारण और मोहक दृश्य था। नैचुरली ! असाधारण ही प्राय: मोहक होता है। है न ? रमता जोगी और चिपकु लाल दोनों ओवरकोट और गम बूट्स में बर्फ पर चहलक़दमी कर रहे थे। उनके सिरों पर फेल्ट हैट्स और गले में मफलर थे, हाथों में दस्ताने थे। दिल मस्ताने थे और उनके जुबां पर मस्तीपूर्ण गाने थे। चारों ओर टूरिस्ट्स थे जो बेगाने थे लेकिन रमता जोगी को यह फीलिंग तो हो ही नहीं सकती थी क्योंकि जो जोगी है वो सब से भीतर से एक है ,जुड़ा है, अभिन्न है वो सबको उनके सूक्ष्म स्तरों पर भली भांति जानता है - चेतना और मानवीय अचेतन मन के विभिन्न आयामों पर। फिर बाहरी तौर पर वो बेशक चाहे एक दूजे से अनजाने थे.

एक महिला ने अपना टूरिस्ट बैग ज़मीन पर रखते हुए अपने पति से कहा , "कितना बढ़िया टाइम था जो हमने यहाँ गुजारा ? अब वापिस जाना पड़ेगा फिर उसी सड़ती तप्ती गर्मी में। काश ! यह लम्हें यहीं पर थम जाते। फिर न यहाँ से हम जाते। ऐसा क्यों होता है कि सारी खूबसूरत चीज़ों का इतनी जल्दी अंत हो जाता है ?"

उसके पति ने रमता जोगी को देखा जो वहीँ पास की एक बेंच पर, बर्फ को बेंच से नीचे गिरा के, बैठने की जगह बना रहा था। चिपकु लाल की हिम्मत वहां बैठने की नहीं हो रही थी, इसलिए वह खड़ा था। रमता जोगी ने उस व्यक्ति से पूछा, "आपकी इजाज़त हो तो आपकी पत्नी के प्रश्न का मैं जवाब दूँ ?"

पति ने हामी भर दी तो चिपकु बीच में ही टपक पड़ा , "यह बिलकुल ठीक किया कि आपने इनसे प्रश्न पूछा। ये रमता जोगी हैं - एक सिद्ध पुरुष। अभी इन्होनें अपना हुलिया आम जनता से छिपा रखा है ठीक वैसे ही जैसे इस धरती ने अपना वास्तविक रूप इस बर्फ के आवरण से छिपा रखा है। और आप नोट करना - सभी आवरण या मास्क या मुखौटे या नकली चेहरे -चाहे वो समाज में हों या प्रकृति में - लगभग सभी मनमोहक ही ओढ़े जाते

हैं। घृणित या डरावने मुखौटे तो किसी खास मकसद के लिए ही काम आते हैं। लेकिन हमारे रमता जोगी जी तो अलग ही हैं। इनका वास्तविक स्वरुप तो ज्यादा सुन्दर और दिव्य है। मुखौटा तो इन पर जंच ही नहीं रहा। वैसे भी सत्य के पुजारी मुखौटों में असहज लगें ,यह तो लाज़िमी ही है।"

रमता जोगी ने चिपकु लाल को प्यार से कहा, " प्रवाह तो ठीक है पर तुम्हारे मन में तो बाढ़ आ रही है। प्रवाह हितकारी है ,बाढ़ नहीं। ज़रूरत से ज्यादा या ज़रूरत से कम बोलना या चुप रहना - दोनों ही बेड़ियाँ हैं। समुचित प्रवाह ही मुक्ति है। समझे,आप ? चिपकु जनाब ?"

फिर उस पति पत्नी को सम्बोधित करते हुए रमता जोगी ने कहा, "ख़ूबसूरत ही नहीं सभी चीज़ों का अंत होता है। मन केवल सुन्दर पलों को आगे ले जाना चाहता है। चाहता है कि वे सदा हमारे साथ रहें। और परेशानी भरे पल जितनी जल्दी हो, ख़त्म हों। लेकिन समस्या यह है कि प्रकृति हमारे हिसाब से नहीं चला करती। जाएंगे तो दोनों जायेंगें - अच्छे और बुरे पल। रहेंगे तो दोनों रहेंगे। अब यदि दोनों ही रहें, जिसमे बुरे वाले पल भी हैं, तो आप बर्दाश्त ही न कर पाओगे। जी ही न पाओगे। इसलिए अंत तो निश्चित है हर चीज़ का,हर पल का, हर स्थिति का। यही प्रवाह है। यही सत्य है। परिवर्तन - शाश्वत परिवर्तन। क्योंकि परमेश्वर शाश्वत है। तो उसकी बनायी प्रकृति में उसकी भी झलक तो आएगी ही न? जैसे आपके रसोई के कामों में, डिशों के बनाने में, घर की साज सज्जा में ,किसी भी क्रिएटिव काम में, आपकी एक निश्चित स्टाम्प परिलक्षित होती ही है। वैसे ही सृष्टि में भी है।"

यह सब सुन के वे पति पत्नी रमता जोगी की ओर खिंचे चले आये और हाथ जोड़ के अपने लिए थोड़ा और मार्गदर्शन का अनुरोध करने लगे। रमता जोगी ने उनकी रुचि और उत्साह देखते हुए आगे कहना शुरू किया, " जीवन और मृत्यु अभेद हैं। हम इन्हें अलग अलग कर देते हैं जैसे कि अच्छा -बुरा, अनुकूल - प्रतिकूल इत्यादि शब्द। जो मेरे लिए अनुकूल है वो किसी और के लिए प्रतिकूल भी हो सकता है। जो मेरे लिए बुरा है - जैसे मान लो मुझे किसी ड्रग के प्रति सेंसिटिविटी है, मेरे लिए वो अनुपयुक्त है - लेकिन अन्यों के लिए वह अनुकूल है, अन्यों की उसी से जान बचेगी। तो समस्त द्वंद्व हमारे खुद के मन ने ही बना रखे हैं। ज्ञान कहता है कोई द्वंद्व नहीं है। आप शून्य डिग्री और सौ डिग्री की तापक्रम रेखा को देखो - सिर्फ एक सीधी लाइन है। कोई द्वंद्व नहीं है। अब आप बीच में खड़े हो जाओ। आप

का शारीरिक तापमान 37.4 डिग्री है। अब आपने इस सच्चाई में भी भेद पैदा कर दिया। आपके एक तरफ ठंडा है और एक तरफ गर्म। जबकि पहले कहीं कोई द्वैत यानी "दो" नहीं थे। तो ये सारे तेरे मेरे ,अपने पराये के द्वंद्व आप सृजन करते हो और कोई नहीं। परमात्मा या सृष्टि नहीं। जीवन और मृत्यु अभेद है लेकिन आपने इन्हें अलग कर दिया।

डर का अंत तभी होगा जब अंत का डर न रहे।

खूबसूरती वर्तमान है। कुछ देर बाद आप यहाँ से चले जाओगे तो फिर इसे आप न देख पाओगे, दुःखी हो जाओगे। क्यों ? क्योंकि तब यह भूत काल हो जाएगा। इसकी स्मृति ही है जो इस दुःख को पैदा कर रही है और कुछ नहीं। वास्तव में स्मृति खुद ही दुःख पैदा नहीं करती। दुःख स्मृति के कारण नहीं उससे मोह के कारण होता है। यह सुंदरता तो यहाँ बहुत टाइम तक रहेगी पर आप इसे अभी छोड़ के जा रहे हो। लेकिन जो सुंदरता यहाँ रहेगी उससे सम्बंधित आपको कोई दुःख नहीं है। आपको तो यह दुःख है कि आप इसे *छोड़ के* जा रहे हो।आप उसे आगे अपने साथ नहीं ले जा पा रहे हो।

कहीं कोई दुःख है ही नहीं यदि आप केवल और केवल वर्तमान में रहो तो । अतीत ही दुःख है यदि वह वर्तमान को डिस्टर्ब करे। वर्तमान में रहने का मतलब है - सदा आगे बढ़ना, जैसे एक दर्पण। जो सदा वर्तमान में रहता है। किसी पुरानी छवि को याद नहीं करता चाहे वह छवि कितनी ही मोहक ही क्यों न रही हो। याद रखो - अतीत के आंसुओं की झिलमिलाहट वर्तमान के शानदार और बिलकुल नए अनुभवों के दर्शन को एवं एन्जॉय करने को धुंधला कर सकती है। कर क्या सकती है ? करती ही है। तो हमारा मन्त्र है, जीवन - तंत्र है - सदा प्रवाह में रहो क्योंकि ईश्वर भी ऐसे ही हैं । ईश्वर के अनुसार चलोगे तो मौज़ करोगे, हर पल करोगे, रोज़ करोगे। नहीं तो दुःखी रहोगे इस बात से कि यह बिछड़ गया, वह बिछड़ गया, कितना प्यारा और सुन्दर पुष्प था ? असमय ही झड़ गया ! फिर दुःखी हुए तो अन्यत्र आनंद की खोज करोगे - नयी नयी चीज़ों में, नए नए अनुभवों में, नए लोगों में। लेकिन फिर गलती कर रहे हो। क्योंकि दुःख का जन्म ही तुम्हारे भागने की क्रिया से हुआ है। यह बात भूल चुके हो। वर्तमान में रहना ही " न भागना" है।

तो इस शानदार सफर का यहाँ अंत हो रहा है, यह क्यों सोच के दुःखी हो रहे हो ? क्योंकि आनंद दृश्य में न था। आनंद तो वर्तमान में था। यहाँ तुम्हें आनंद आया क्योंकि यहाँ तुम

अपनी सारी डेली लाइफ की प्रोब्लेम्स ,जिम्मेदारियां, ऑफिस के टार्गेट्स और घरेलु लक्ष्य - सभी छोड़ के, भुला के एन्जॉय कर रहे थे। एन्जॉय सिर्फ तभी किया जा सकता है जब कोई सम्पूर्णतया वर्तमान में रहता है। बच्चों को देखो। कैसे हर पल एन्जॉय करते हैं ? वह न बीते कल की सोचते हैं और न आने वाले कल की। आप अपने बच्चे से ,जो वहां खड़ा अपने खिलौने से खेल रहा है और यहाँ से जाने के कारण बिलकुल भी दुःखी नहीं है, पूछ के देखो ।"

फिर रमता जोगी और चिपकु लाल, मुस्कुराते हुए, अपनी बाहों को मस्ती में झुलाते हुए, यह गीत गाते हुए, वहां से आगे बढ़ गए -

वर्तमान अनंत प्रवाह में
रह पाना ही मुक्ति है,
बिना विभक्ति के, भक्ति है,
सृजन, ज्ञान की शक्ति है।

ध्यानियों का ध्यान है,
यही समाधी का समाधान है,
यही जीवन - सूत्र महान है,
यही यही वेदों का परम ज्ञान है।

कहीं रुकें नहीं,कहीं थकें नहीं,
पीछे गर्दन घुमा के तकें नहीं
गुजरे पल में फंसे मन को
फिर से प्रवाह में लाओ,चलें

आओ चलें ,आओ चलें
आओ चलें ,आओ चलें

क्लब पार्टी

रात गहरी थी। बाहर गलियों में घुप्प अँधेरा था। शायद स्ट्रीट लाइट्स काम नहीं कर रहीं थीं। क्लब के भीतर रंगबिरंगी नाचती रोशनियां थीं और नाचती बार बालाएं थीं। लोग मस्ती में थिरक रहे थे। कइयों ने हाथ में जाम पकड़े हुए थे और नेपथ्य में गीत चल रहा था - छल्कायें जाम आइये, आपकी आँखों के नाम। इन नाचती रोशनियों के अलावा कोई और रोशनी वहां न थी। शायद तेज़ रोशनी में वे यथार्थ जगत के प्रति होशमंद हो जाते। मदिरा और धुंधला प्रकाश - इन दोनों का संगम ही उन बेसुध थिरकने वालों के लिए एक वर्चुअल संसार का निर्माण कर रहा था जो पूरे प्रकाश में संभव होता नहीं।

रमता जोगी और चिपकु लाल एक कोने में ख़ामोशी से, इस अजब दुनिया का, गज़ब नज़ारा देखते हुए, बैठे थे। उनके ठीक सामने कोट पैंट और टाई लगाए एक अधेड़ उम्र का व्यक्ति बैठा था। उसने रमता जोगी को नोटिस किया और अपना परिचय देते हुए अपना नाम सुखदास बताया। वह एक फैक्ट्री का मालिक था और अक्सर यहाँ चला आता था। सुखदास ने रमता जोगी से पूछा, "ऐसी जगहों में एक जोगी का क्या काम ? मुझे कुछ समझ नहीं आ रहा।"

रमता जोगी ने कहा, " एक अन्वेषक के लिए कुछ भी बहिष्कृत नहीं होता। जो सारी सृष्टि और उसके नियंता की हर कण में उपस्थिति को देख के मतवाला हो चूका हो तो उसके लिए कौन सी जगह है जहाँ उसका प्यारा नहीं ? कौन है जो उसे प्यारा नहीं ? जो सबको अपने में समाहित करे वही योगी है न कि - यह अच्छा है यह बुरा है यह भला है यह गन्दा है - ऐसी भेदपूर्ण सोच वाला। हम अद्वैत के प्रेमी हैं, अद्वैत के पुजारी हैं, इसलिए अद्वैत में रहते भी हैं। हम से बाहर - कोई नहीं। कोई गैर नहीं। किसी से मोह नहीं, किसी से बैर नहीं।"

अब तो सुखदास की आँखें आश्चर्य से फ़ैल गयीं और उसने अपनी कुर्सी रमता जोगी की ओर खिसकाते हुए कहा, " तो फिर बताइये - प्राचीन काल से ही सारे संत क्यों मौज़ मस्ती के इतने खिलाफ हैं ? हमें तो ये तथाकथित धार्मिक लोग गिरा हुआ ही समझते हैं। आखिर मस्ती और इन्द्रियों की परस्ती से इन्हें इतनी चिढ़ क्यों है ? कहीं ऐसा तो नहीं कि - अंगूर

खट्टे हैं ? वैसे ये लोग बाहर से कैसे भी मुखौटे पहनें, अंदर से तो सभी एक ही थैली के चट्टे बट्टे हैं। क्या कहते हो आप ,जोगी जी महाराज ?" इतना कह के उसने अपना सिगार सुलगा लिया और धुंए की एक लकीर ऊपर मुंह कर के छोड़ी। उसके अंदाज़ में एक लापरवाही स्पष्ट थी। साथ ही एक प्रकार की कटुता भी थी।

रमता जोगी ने कहा, "यदि तुम्हारे पास सुनने वाले कान हों तो मेरे पास बताने को काफी कुछ है।"

सुखदास और नज़दीक आ के बोला, "कहिये ! यह सुखदास अभी कुछ समय के लिए आपका दास हुआ। गो अहेड। न शर्माइये। फरमाइए।"

रमता जोगी ने बोलना शुरू किया, " जब आप कोई गंभीर काम कर रहे होते हैं जो बहुत इम्पोर्टेन्ट है तो क्या आप खुद को डिस्ट्रैक्ट करते हैं ? नहीं न ? आपके ऑफिस में जब बोर्ड मीटिंग्स होती हैं और प्रेजेंटेशन वगैरह चल रहे होते हैं तो क्या आप बर्दाश्त करेंगे कि कोई बोर्ड मेंबर वहां नाचने कूदने लग जाए या गाना गाने लग जाए। ये दोनों कृत्य बुरे नहीं हैं पर उनकी वहां अभी ज़रूरत नहीं है। वे डिस्ट्रैक्शन हैं। मान लीजिए आप कार चला रहे हैं तो उस वक़्त क्या आप लापरवाही दिखा सकते हैं ? सड़क छोड़ के यहाँ वहां नज़रें घुमा सकते हैं ? याद रखिए - ज़िन्दगी में कई बार डिस्ट्रैक्शन ही डिस्ट्रक्शन बन जाता है। कैज़ुअल तरीका कैज़ुअलिटी को आप तक खींच ला सकता है।

संतों का एक ही उद्देश्य रहा है आम जनमानस को उच्च जीवन की ओर प्रोत्साहित करना। इसीलिए वो आपको सावधानी हेतु एकाग्र और भटकाव रहित, जीवन रूपी कार की ड्राइविंग के लिए चेताते रहे हैं।

और इन्द्रियों में क्या है ? सूचनाएं हैं कई प्रकार कीं। अनुभव क्या है ? उन सूचनाओं का अहसास। लेकिन सूचनाओं का अहसास दिमाग को थकाता है, डल करता है। क्या आपको प्रत्येक मनोरंजन के उपरांत एक अजीब प्रकार की थकान ,एक विशिष्ट प्रकार की खिन्नता महसूस नहीं हुई ? यह क्या सुख - उपभोग है ? आप सुखदास हो। यानी आप सुख के दास हो। चलो नाम से ही। पर क्या किसी भी सुख ने आपको भीतर से, सम्पूर्णता से सुख दिया है ?

तो फिर क्या करें ? मौज़ मस्ती न करें ? ऐसा मैंने कब कहा ? इसका सही तरीका मैं आपको बताता हूँ। मैं भी तो यही हूँ इस क्लब में। मैं एक जोगी हूँ। लेकिन मैं इसे पूरा एन्जॉय कर रहा हूँ। उन नाचते हुए बेसुध लोगों को मैं अभिन्न अद्वैत रूप से देख रहा हूँ। उनकी हंसी मेरी हंसी बन गयी है। उनका नाच मेरा नाच है। मैं यह नहीं कह रहा कि दूर से ही सब देखो और खुद शामिल न होओ। मैं वहां जा के खुद भी नाच सकता हूँ। दरअसल मैं इन्द्रियों द्वारा प्रदत्त सूचनाओं की गलियों में रह के एन्जॉय नहीं कर रहा बल्कि इन गलियों के ऊपर किसी मकान की छत से सब एन्जॉय कर रहा हूँ। मैं "मैं - शून्य" हूँ। इसलिए मैं एन्जॉय टोटली कर सकता हूँ। गली में रह के, ईगो या "मैं" द्वारा निर्देशित हो के एन्जॉय करना सुख है जो क्षणिक ही हो सकता है। लेकिन छत की ऊंचाई से साक्षी भाव से सर्वसम्मिलित हो के एन्जॉय करना सुख नहीं आनंद है जो कभी समाप्त नहीं हो सकता।

चलो एक बात और सुनो, सुखदास। यदि सम्पूर्ण मन से, जो केवल ध्यान द्वारा ही सक्रिय होता है, आप इस संसार के सुखोपभोग भी करो तो कोई हानि नहीं। यह ऐसी आग है जिसकी कोई राख नहीं बनती। और राख या अवशिष्ट ही सारी प्रॉब्लम की जड़ है। सम्पूर्ण मन सुख नहीं आनंद की अवस्था में होता है। अत: तुम इस प्रकार एन्जॉय करोगे तो तुम एक कमल के फूल की तरह कीचड़ में भी उससे अनछुए रह पाओगे। यही परम ज्ञान है।"

यह कहते कहते रमता जोगी ने अपनी कुर्सी पीछे खिसकायी और नाचती मंडली में अपनी एंट्री करायी। चिपकु लाल का तो मुंह आश्चर्य से खुला का खुला रह गया। यह क्या ? एक जोगी का क्लब में मदहोशों के संग डांस ? वह तो बिलकुल हक्का बक्का हो गया। जिस गेंद पे जोगी को हो जाना चाहिए था आउट, उस पे छक्का हो गया। जोगी के लयबद्ध मस्ती भरे ऊर्जावान नृत्य ने सृजित कर दी थी सभी दर्शकों के लिए एक अलौकिक तन्मयावस्था, जिसे इंग्लिश में कहा जाता है - ट्रांस।

कुछ देर में ही रमता जोगी माइक ले के सबको सम्बोधित करने लग गया। बैकग्राउंड म्यूजिक बंद हो चुका था। हॉल की लाइट्स बढ़ा दीं गयीं थीं। हैरान परेशान लोग बड़ी उत्सुकता से इस अद्भुत और विचित्र जोगी को सुनने के लिए तत्पर हो गए। रमता जोगी ने कहा, "सुनो प्यारो !" उसके ऐसा कहते ही भीड़ ने ख़ुशी से तालियां बजाते हुए शोर मचाया।

जोगी ने आगे बोलना शुरू किया, " किसी भी व्यक्ति या वस्तु को एक दायरे में बांधना ग़लत है। क्योंकि कोई भी दायरा अक्सर आपके संकुचित, ठहरे हुए, बासी, गुजरे हुए कालखंड की मान्यताओं से ही बनाया जाता है। वह दायरा बदलते परिवेश और वक़्त के हिसाब से तालमेल नहीं बिठा पाता। मुक्त करो। इंसानों को मुक्त करो। किसी भी बेड़ी से न बांधो। उसे आयरन स्ट्रैट जैकेट में न जकड़ दो। आपने धारणाएं बना रखीं हैं कि एक साधू को ऐसा होना चाहिए ,एक जोगी को वैसा होना चाहिए, एक महान व्यक्ति को ऐसा होना चाहिए, पति को ऐसा होना चाहिए, पत्नी को वैसा होना चाहिए। संक्षेप में हमने सबकी सीमाएं तय कर दीं हैं और जो इन दायरों से ज़रा भी इतर होता दिखे उसकी समीक्षा होती है ,उसको कटघरे में खड़ा कर दिया जाता है।

मैं एक जोगी हूँ। आपके हिसाब से मुझे कैसे रहना चाहिए ? सदा माला जपते, धूनी रमा के बैठे रहते, सदा ध्यान मग्न और सिर्फ आध्यात्मिक चर्चाएं करते हुए ? यही न ? योग आपके द्वारा या किसी अन्य द्वारा निर्धारित होता है क्या ? योग क्या है, पता भी है ? यह किसी भी चीज़ का बहिष्कार नहीं वरन सभी कुछ का समावेश है। यह चेतन मन और अचेतन मन का योग है। यह माया और मायावी का अभेदत्व है। यह संसार और निर्वाण की अभिन्नता की समझ है। यह योग और भोग के रहस्य का सही ज्ञान है। योग वो है जिसमें कोई भी "वियोग" नहीं अर्थात जिस से बाहर कुछ भी नहीं है। क्या नृत्य करने से मैं जोगी होना छोड़ दूंगा ? फिर तो भगवन शिव जो नटराज हैं उन्होंने नृत्य शास्त्र की खोज कर के एक जघन्य अपराध कर दिया है शायद !

सच्चा योगी किसी का भी त्याग नहीं करता, किसी को भी ग्रहण नहीं करता। वह दर्पण की तरह है। दर्पण न तो त्यागता है न कुछ हासिल करता है। सम - भाव ही योग है। श्री कृष्ण गीता में कह गए हैं - इहैव तैर्जित सर्गो येषां साम्ये स्थितं मन: अर्थात जिनका मन समभाव में है उन्हें सब हासिल हो जाता है। आप कुछ भी करें, किसी भी स्थिति में रहें, बाहरी उद्दीपनों का कोई महत्व नहीं है। आप प्रतिक्रिया क्या करते हैं, महत्व उसका है। आप आकाश की तरह निःसंग हैं तो चाहे कितने ही बादल आपके इर्द गिर्द मंडराते रहें, वह आकाश अप्रभावित ही रहेगा। यही योगी की निशानी है।"

चिपकु लाल को भी अब जोश आ गया था। वह भी डांसिंग फ्लोर पर चढ़ आया। उसने कहा, " मुझे भी एक बात अभी अभी सूझी है। सोचता हूँ, कह ही दूँ। आप सब ने नोट किया होगा कि जोगी जी जब स्टेज पर बोलने आये तो तुरंत बैकग्राउंड म्यूजिक रोक दिया गया और डिम लाइट्स हटा के तेज़ रौशनी कर दी गयी। क्यों ? क्योंकि वह, जो महान और महत्वपूर्ण है, जब मुखर होता है तो डिस्टर्बिंग चीज़ें या क्रियाएं रुक जाती हैं।

इसी तर्क से जब इन्द्रियों द्वारा खुद को पगलाना हो तो उल्टा कर देते हैं। स्थितियां पलट देते हैं। लाइट कम कर दी जाती है और शोर या डिस्ट्रैक्शन बढ़ा दिया जाता है। है न ? ऐसा ही होता है न ? अभी यही हुआ न? इसमें क्या किसी को कोई संदेह है ?"

सभी लोगों ने जम के तालियां बजायीं और रमता जोगी और चिपकु लाल का बहुत बहुत धन्यवाद किया। फिर उनसे विदा ले के दोनों क्लब से बाहर निकले और अँधेरी गली में यह गीत गाते हुए, घुप्प अँधेरे में अदृश्य हो गए -

मंज़िलें तो बांधती हैं मुसाफिरों को
सफर हो वो जो कभी ख़त्म न हो

कितने बादल आये कितने गए
लेकिन नभ नयन कभी नम न हों

कोई भी बेड़ी मंजूर नहीं
कोई भी पिंजरा गवारा नहीं

कोई भी नहीं जो गैर है
कोई भी नहीं जो हमारा नहीं

कोई निशाँ न छोड़ें कदमों के
कोई हमारी राह का रोड़ा नहीं

कोई आशियां हमने बनाया नहीं
साथ किसी का मग़र छोड़ा नहीं

थम जाए हवा तो बासी हो जाए
तब यह हवा ही कहाँ कहलाये

यह मर्म समझ पाओ तो चलें
आओ चलें, आओ चलें।

बाज़ीगर

एक मेले में एक बाज़ीगर एक रस्सी पर दिख रहा था जो क्रॉस के अंदाज़ में लगायीं गयीं बांस के डंडों से बंधीं थीं। रस्सी पर एक साइकिल थी। साइकिल पर बाज़ीगर संतुलन बनाये बैठा था। नीचे उसे गिरने से बचाने के लिए एक जाल था। वह रस्सी पर रखी साइकिल पर संतुलन बनाते हुए कई गेंदों को हवा में उछाल के जग्गलिंग यानी बाज़ीगिरी दिखा रहा था। उसका करतब कमाल था।

मेला देखने किसी मल्टीनेशनल कंपनी का एक सीईओ भी आया हुआ था। लेकिन थोड़ा सकपकाया हुआ था। अन्य दर्शकों के बीच वह भी एक कुर्सी पर बैठा था। उस जैसे वहां पर कई थे। लेकिन वह खुद को अन्यों से सुपीरियर मान रहा था, इसलिए अपने इर्द गिर्द बैठे लोगों को वह नीची नज़र से देख रहा था और जल्द ही वहां से खिसक जाना चाहता था। उस भीड़ को देखते हुए हिकारत से भरी उसकी दृष्टि, मानो यह कह रही हो, "अरे ! मैं इन जाहिलों के बीच कहाँ फंस गया ? ये निकम्मे, बेरोज़गार, निम्न वर्ग के लोग और मैं अल्ट्रा रिच सोफिस्टिकेटेड सोसाइटी का आइकॉन ! मैं – एक खरबों डॉलर की कंपनी का सीईओ और मेन शेयरहोल्डर ! मैं कहाँ और ये लोग कहाँ ?"

ठीक उसी समय, उसके बगल में खाली पड़ी दो कुर्सियों पर रमता जोगी और चिपकु लाल आ के बैठ गए। वे भी उस मदारी की बाज़ीगरी देखने में तल्लीन हो गए। अचानक रमता जोगी ने मुंह से सीटी बजाते हुए कोई फ़िल्मी धुन निकाली और फिर एक ज़ोर का ठहाका लगाया। इस पर तुरंत उस सीईओ ने घूर के रमता जोगी को देखा और मन ही मन बुदबुदाया, "पागल लोग। शांति से कोई परफॉरमेंस देखनी भी नहीं आती। पता नहीं कहाँ कहाँ से आ जाते हैं ऐसे लोग?"

तभी रमता जोगी ने चिपकु लाल को देखते हुए कहा," लोग अटके हैं, भटके हैं, दम्भ – मदिरा के पता नहीं कितने, मटके गटके हैं ? दिल में इनके नफरत है फिर भी नियति की मार देखो ? इन्हें उन्हीं जाहिलों के ही बगल में ही बैठना पड़ा है। दिल में चाहे कितना ही कहें कि हम कितने श्रेष्ठ हैं, कितने उन से हटके हैं ?"

अंततः शो समाप्त हुआ। बाज़ीगर की नज़र तभी रमता जोगी पर पड़ गयी और उसने उन्हें तुरंत मंच पर आने का अनुरोध किया और उन्हें माइक थमाते हुए कुछ वचन कहने को कहा।

रमता जोगी ने माइक लिया और उस बाज़ीगर से यह कहा, "लोग सड़क पर उतनी बढ़िया साइकिल नहीं चलाते जितनी बढ़िया तुमने उसे एक रस्सी पर संतुलित किया। कहते हैं चलती साइकिल ही संतुलित रह सकती है तो फिर तुमने रुकी हुई कैसी संभाली?"

बाज़ीगर ने हाथ जोड़ते हुए जोगी से कहा,"आप को क्या समझाऊं ? आप तो सर्वज्ञ हैं, ज्ञान स्वरुप हैं। मेरा आपके सम्मुख कुछ भी बोलना – *छोटा मुंह बड़ी बात* – के समान होगा। फिर भी आपने पूछा है तो जवाब देना होगा। चलती साइकिल क्यों नहीं गिरती ? क्योंकि उसके दायें और बांयें पैडल बारी बारी से चलाये जाते हैं। एक नीचे जाता है तो दूसरा ऊपर। इस तरह वो बैलेंस बनाते हैं। खड़ी साइकिल को संतुलित करने के लिए मुझे अपने हाथों और बाहों को ऊपर नीचे हिला के संतुलित स्थापित करना पड़ा। सिद्धांत वही है। यही नियम गृहस्थी सँभालने के लिए भी लागू होता है। जब दम्पति में से कोई एक अग्नि की तरह क्रोध से तप रहा हो तो दुसरे को शीतल जल का कार्य करना चाहिए अन्यथा पारिवारिक संतुलन गड़बड़ाएगा, मामला और बिगड़ जाएगा। जब एक सुस्त हो तो दूसरा उसे चुस्त करे। जब एक बर्फ की तरह ठोस, खुद में ही कैद, संवादहीनता और उदासी के मूड में हो तो दूसरे को चाहिए कि वह उसे उत्साह की ऊष्मा दे, उसे प्रोत्साहित करे, उसके संकोच को दूर करे, उसके डगमगाए हुए आत्म विश्वास को दुरुस्त करे।"

रमता जोगी ने उसी सीईओ को देखते हुए उस बाज़ीगर से फिर पूछा, "अच्छा, घर की तो बात हो गयी। क्या ऑफिस में भी ये सिद्धांत कारगर हैं ? कॉर्पोरेट सेक्टर में तो यह अलिखित नियम है कि जितना काम कोई कर सकता हो, उससे बढ़ा के ही नीचे के कर्मचारियों को टार्गेट्स दिए जाएँ ताकि वो सर्वोत्तम रिजल्ट्स दे। कोई अपनी योग्यता से कम काम न करे। खाली बैठ आराम न करे। इसे कहते हैं संतरा पूरा निचोड़ना। अधिकतम काम करवाओ और अधिकतम लाभ कमाओ।"

बाज़ीगर ने कहा, "नहीं, जोगी जी। ऐसी खून चूसू प्रणाली देखने में तो बढ़िया प्रतीत होती है लेकिन लॉन्ग टर्म में यह फेलियर ही सिद्ध होती है। वर्कर्स तनाव में रहेंगें। ऊर्जा और सुकून के अभाव में रहेंगें। तो अन्ततोगत्वा तो कंपनी पिछड़ने लगेगी। मार्किट में तो रैट रेस

है। सर्वाइव ही नहीं करेंगें। आजकल कंपनियां वर्कर्स को खुश और स्वस्थ रखने की जुगत में रहती हैं ताकि उत्पादन बढ़े। यही कार्यस्थल का संतुलन है - वर्कप्लेस जग्गलिंग है। फिर आता है घर और नौकरी का संतुलन। कैसे तालमेल बिठायें ? पति /पत्नी अथवा घर को भी टाइम दें और साथ ही ऑफिस के प्रति भी पूर्ण निष्ठा रहे। यह असली जग्गलिंग है। यही सच्चा संतुलन है।"

एक मंदिर का पुजारी भी मेला देखने आया हुआ था। उसे बाज़ीगर की बातें किसी प्रखर दार्शनिक और एक सिद्ध पुरुष की बातों जैसी लगीं। वह कुर्सी से उठ खड़ा हुआ और उसने बाज़ीगर से पूछा, "यह जो कुछ भी आपने कहा,सत्य है ,अद्भुत है। मेरी समझ से बाहर है कि एक मदारी कैसे ऐसी गूढ़ बातें कर सकता है ? मुझे ऐसा जान पड़ता है कि हो न हो,आप किसी मठ से वेश बदल के आये कोई योगी, कोई महंत हो, मदारी के वेश में छिपे हुए संत हो। निश्चित ही ऐसा ही है। क्योंकि हर कोई ऐसी चर्चा या व्याख्या कर ही नहीं सकता। और चलते चलते मुझे यह भी बताते जाइये कि क्या ये बातें केवल वर्तमान समय से सम्बंधित हैं, क्योंकि मॉडर्न लाइफ फ़ास्ट हो गयी है और इस तेज़ भागदौड़ में हम असंतुलित हो चुके हैं ? या यह अनादि काल से चली आ रही मानवीय समस्या है ?"

रमता जोगी ने तभी बाज़ीगर से माइक लिया और यह कहा, "इसका जवाब मैं दूंगा। आप तो मंदिर में रोज़ भगवद्गीता का पाठ करते ही हो। है न ? फिर आप विस्मृति के झूले कैसे झूल गए? यह श्लोक कैसे भूल गए - मामनुस्मर युध्य च ? अर्थात हे अर्जुन ! मेरा स्मरण भी कर और युद्ध भी कर। अर्थात संतुलन बना। एक को त्याग के दूसरा अपनाना बहुत आसान होता है पर दोनों में तालमेल बिठाते हुए दोनों को ही सिद्ध करना ही योग है। संतुलन ही योग है। संतुलन ही कार्य कुशलता है। क्योंकि योग कर्मसु कौशलम - योग ही कार्य कुशलता है। फिर यह भी कहा गया है अर्जुन से - इहैव तेर्जित: सर्गो येषां साम्य स्थितं मन:। यानि उन्होंने सब कुछ प्राप्त कर लिया है जिनका मन संतुलन में है। तो बाज़ीगरी संतुलन से आती है। और ज़िन्दगी के परम लक्ष्य और अर्थ के खोज की बाज़ीगरी भी ध्यान से उत्पन्न संतुलन से ही आती है। सबसे बड़ा बाज़ीगर तो परमेश्वर है जिसने अनंत ब्रह्माण्डों की अनंत सृष्टियों में इतना विराट इतना सूक्ष्म संतुलन और व्यवस्था बनायी हुई है कि कहीं कुछ गड़बड़ नहीं, कहीं कुछ त्रुटिपूर्ण नहीं।

कुछ ऐसे भी लोग हैं इस दुनिया में, जो अपुष्ट और ज़ल्दबाज़ी में बना ली गयी अपनी ही धारणाओं के हत्थे चढ़ जाते हैं और खुद को जाने क्या समझ लेते हैं ? समाज के द्वारा गढ़ लिए गए झूठमूठ के कीर्ति शिखरों पे चढ़ के नीचे हिकारत भरी नज़रों से देखते हुए खुद से कहते हैं, " इन जाहिलों में मैं कहाँ फंस गया ? ये कहाँ और मैं कहाँ ?"

यह काल्पनिक भेदभाव ही असंतुलन है। असंतुलन से इंसान गिरता ही है। तो गिरा हुआ कौन हुआ ? समाज के उच्चतम पैरामीटर्स पर खरे उतरते लेकिन दम्भी और गर्वित हुए लोग क्या हैं ? क्या हस्ती है उनकी ? इस बाज़ीगर की मानसिक और आधात्मिक ऊंचाई को अभिमान की मदिरा पिए और मदमस्त हो के गर्त में पड़े लोग क्या ही समझ पायेंगें।"

इस के बाद रमता चिपकु लाल ने बाज़ीगर से विनम्रतापूर्वक हाथ जोड़ कर विदा ली और यह गीत गाते हुए मेले से बाहर हो गए -

आओ चलें ,आओ चलें
आओ चलें, आओ चलें

अभिमान - मदिरा पी के जग में
सिर बहुतों का चकरा रहा है

कर चुकी है उनको बदहवास इतना
अधिक,और अधिक, की हवस

कि माउंट एवेरेस्ट भी अब उनको
एकदम बौना नज़र आ रहा है

मूढ़ता भरे भेद मिटाओ चलें
आओ चलें ,आओ चलें

नूडल्स

मेले से निकल कर रमता जोगी और चिपकु लाल आगे उस शहर के शोर शराबे वाले और व्यस्त एंटरटेनमेंट हब की ओर आ गये। दोनों अब मुख्य सड़क पर आ गए थे जहाँ ट्रैफिक का भयंकर आवागमन हो रहा था। सड़क का एक कोना एक घुमावदार स्थान पर चौड़ा हो रहा था जहाँ पहाड़ी से नीचे की ओर घाटी के सुन्दर दृश्य देखे जा सकते थे। वहां किसी ने व्यू पॉइंट बना दिया था और कुछ मेज कुर्सियां डाल दीं थीं। एक छोटा सा कैफे बना दिया था। लोहे की एक रेलिंग बना के उस पर कुछ झंडे लगा दिए थे जो हवा में फहरा रहे थे। रमता जोगी और चिपकु लाल उन्हीं कुर्सियों में से दो कुर्सियों पर बैठ गए। चाय और कॉफी की तेज़ गंध हवा में फ़ैल रही थी। दोपहर का समय हो चला था। इसलिए दोनों ने नूडल्स का आर्डर दिया और सड़क पर गतिशील ट्रैफिक को देखने लगे।

रमता जोगी ने चिपकु की ओर अर्थपूर्ण दृष्टि से देखते हुए और भीतर से अकस्मात प्रस्फुटित होने वाली एक निर्बाध खिलखिलाहट को बड़े जतन से छिपाते हुए कहा ,"सुनो चिपकु जी ! सड़क पर चलते दो लोग या वाहन जब विपरीत दिशा से आ चिपकें तो क्या होगा ?"

रमता जोगी की हंसी रुक ही नहीं रही थी। फिर भी उसने किसी तरह स्वयं पर काबू करते हुए बोलना शुरू किया, "यानी आपस में टकरा जाएँ तो क्या होगा ? दोनों इसी बात पर अड़ेंगे कि गलती दूसरे की ही है और फिर लड़ेंगें। अपनी तो गलती किसी की कभी होती ही नहीं।"

तभी वेटर स्टीमिंग नूडल्स की दो प्लेटें उनके सामने रख गया। उसमें से निकलती हुई कई प्रकार की खुशबुएँ उनके नथुनों में प्रवेश कर के उनके मस्तिष्क को ललचाने लग चुकीं थीं। रमता जोगी पर मानो इन्द्रियों की हलचलों का कोई प्रभाव न था।

उसका प्रमाण यह था कि उसने उसी चिंतन स्तर को बनाये रखा और पूर्ववत उसी गहराई से आगे कहना ज़ारी रखा, "क्योंकि ईगो वही करती है न जिसे वह सही मानती है, गलत मानती होती, अनुचित जानती होती, तो उसे करती ही क्यों ? क्योंकि यह जानते हुए कि

कोई काम गलत है, त्रुटिपूर्ण या आगे गड़बड़ होने वाला है ,मनुष्य का दिमाग उसे मुश्किल से ही शुरू करता है क्योंकि वह अनिश्चितता से डरता है। जब यह निश्चित हो जाता है कि कोई एक्शन बिल्कुल परफेक्ट है और सही है तभी तो दिमाग शरीर को उसे करने की हरी झंडी देता है।"

तभी अचानक पता नहीं कहीं से काले रंग का एक कुत्ता नूडल्स की खुशबु सूंघता हुआ उनके पास आ गया और उनके पास ही ज़मीन पर बैठ गया। चिपकु लाल ने कुछ नूडल्स उस कुत्ते की ओर उछाले जिन्हें उसने हवा में ही लपक लिया। बिना एक भी कतरा नीचे गिराए।

रमता जोगी ने नूडल्स को फोर्क से उठाया और उस ग्रास को पूर्णता से स्वाद ले के खाया। अभी भी नूडल्स स्टीमिंग हॉट थे। मसाले इसे और भी हॉट बना रहे थे। रमता जोगी ने आगे कहना ज़ारी रखा, "सिर्फ इसीलिए इंसान अपनी गलती आसानी से नहीं मान पाता, खुद को सदा सही ठहराने की कोशिश करता रहता है, क्योंकि अपने एक्शन को गलत मानते रहने से उसे स्वयं पर अविश्वास होना शुरू हो जाएगा। वह हिचकिचाने लग जाएगा और हीन भावना से ग्रस्त होगा। अस्तु हमारी प्रवृत्ति ही है कि विवाद होने पर गलती यदि किसी की है तो वह सिर्फ़ और सिर्फ़ दूसरे की ही हो सकती है।

सड़क पर होने वाले समस्त रोड रेज, यानी ड्राइविंग के वक़्त दूसरे की अनुचित ड्राइविंग के फलस्वरूप आने वाला क्रोध, इसी सोच का परिणाम है। घर में भी पारिवारिक विवाद और प्रधानता के संघर्ष के पीछे भी यही मनोवृत्ति है। पति पत्नी के झगड़े हों या सड़क पर दो वाहन चालकों के बीच होने वाले विवाद या यह पूर्वाग्रह कि ऑफिस में जूनियर्स ही गलती करते हैं, बॉस अथवा अधिकारी नहीं, ऐसी सोच ही विश्व में सर्वत्र व्याप्त हंगामों की जड़ है।"

अपनी प्लेट पूरी ख़त्म करते हुए चिपकु लाल ने एक डकार ली और कहा ,"तो, निष्कर्ष यह है कि सारी समस्या की जड़ यह है कि *मैं ही सही हूँ।* सदा सर्वदा एकमात्र मैं ही हूँ जो गलती नहीं करता। कर ही नहीं सकता क्योंकि जो मुझे सही लगता है मैं वही तो करता हूँ। और यदि मैं वो करता हूँ जो है सही, तो फिर गलती मेरी कैसे हुई ?"

रमता जोगी ने कुर्सी पीछे की ओर खिसकाई और उठ खड़ा हुआ और यह कहा, “इसी तर्क पर गौर करो। “सही लगता है” - इस वाक्य पर गौर करो। जो सही लगता है ज़रूरी नहीं कि वो सही ही हो। दुसरे को भी तो अपना पक्ष सही लगता है न ?

सही लगने और सही होने के भेद में ही तो सारा खेल है। इसीलिए तो शांतिपूर्ण तरीके से, बुद्धिमत्ता से, संघर्ष रहित हो कर, निरंतर प्यार से जी पाने में, यह दुनिया फेल है।”

चिपकु यह सुनते ही उत्साह से बोल पड़ा, “इसीलिए जब हमें कोई नीचा दिखाता है, जीवन की उपलब्धियों में हमें पछाड़ता है या सड़क पर ओवरटेक करता है तो हमें पसंद नहीं आता। क्योंकि हम हार कैसे सकते हैं ? क्योंकि हम तो सर्वदा सही हैं और सही को तो कभी हारना नहीं चाहिए। अपने दिल की गहराईयों में हम सही हैं। सही अनंत है, सही अद्बितीय है, सही अकाट्य है। और यदि ऐसा है तो हम फिर किसी से ओवरटेक कैसे हो जाएँ, किसी से कमतर कैसे हो जाएँ ? उनकी ऐसी की तैसी,जो हमें नीचा दिखा रहे हैं, चाहे अनजाने में, चाहे जान बूझ कर।”

रमता जोगी ने कहा, “देखो जब तुम्हें ज्ञान हो रहा है तो भावावेश में क्यों आ रहे हो ? ज्ञान तो भावनाओं के तूफानों से हमें सुरक्षित करता है। चलो, इस ज्ञान की मस्ती में झूमो। अपनी ही प्रमुखता या प्रधानता की लालसा इस अनंत ज्ञान के प्रवाह में रूकावट है, इसलिए “आओ चलें ” का गीत गाओ। “आओ चलें” की गलियों में घूमो। किसी रुकी हुई चट्टान को, उससे ऊपर की कोई चट्टान ही नीचा दिखा सकती है लेकिन उन मस्त हवाओं को नहीं जो समस्त पर्वत शिखरों से भी ऊपर बहती है। हवा बनो। बहता पानी बनो। रमता जोगी बनो। रमता जोगी कौन है ? वो जो प्रत्येक नवीन पल में, प्रत्येक परिस्थिति में, सिर्फ वर्तमान में रहता है। और जो सिर्फ वर्तमान में रहता है केवल वह ही “रम” सकता है। और जो रम सकता है वही रमता जोगी है।”

रेस्टोरेंट से बाहर निकलते ही दोनों ने एक देखा कि एक सफ़ेद शर्ट और काली पैंट पहने एक व्यक्ति के ऊपर एक उड़ते हुए कौवे ने बीठ कर दी। उसकी सफ़ेद कमीज गन्दी हो गयी। वह ज़ोर से कौवे पर चिल्लाया। रमता जोगी ने चिपकु लाल से पूछा, “बताओ, किसकी गलती है ? कौवे की या इस अपसेट इंसान की ?”

चिपकु लाल ने खींसे निपोरते हुए कहा, “निश्चित रूप से इस आदमी की। क्योंकि कौवे की पॉटी करने की कोई फिक्स जगह थोड़े ही होती है कि यह तुम्हारे लिए निर्धारित स्थान है इस काम के लिए, कि यहाँ तुम पॉटी करोगे और यहाँ नहीं कर सकते। और जो हो गया, वह हो गया। वह आदमी इसमें क्या कर सकता था ? वह सिर्फ यह कर सकता था - आओ चलें। इस गुजरे हुए प्रतिकूल पल में ही अटका न रह के आगे बढ़ता। आगे बढ़ना और अतीत में ही न अटके रहना ही है इस महान मन्त्र का सन्देश - आओ चलें , आओ चलें।”

रमता जोगी और चिपकु लाल रेस्टोरेंट से नीचे उतर के सड़क पर आ गए और यह गीत गुनगुनाते हुए सड़क के अंत में दीख रही एक टनल की ओर चल दिए -

एक ने देखा हैड सिक्के का
दूसरा देख रहा है टेल
दोनों कह रहे मैं ही सही हूँ
मैं कहूं दोनों ही हैं फेल

अपने पक्ष को ही देखना है
त्रुटिपूर्ण और सीमित ज्ञान
दोनों पक्षों को निष्पक्ष हो के
कंसीडर करना है न्याय महान

बुद्धिमान कहता है हमेशा मैं
सही नहीं भी हो सकता
ठेठ मूर्ख को है घनघोर यकीं
कि गलत वह हो ही नहीं सकता

एक ही टांग पर खड़े होना
एक ही विचार बिंदु पर अड़े होना
असंतुलित होना है, प्रशांति खोना है
यह बाते सबको बताओ, चलें

आओ चलें, आओ चलें
आओ चलें, आओ चलें।

पहाड़ी सुरंग

रेस्टोरेंट के दायीं ओर सड़क एक पहाड़ी सुरंग में प्रवेश करती थी जो पहाड़ी के दूसरी ओर एक चौड़े भूभाग में जा निकलती थी। वहां से मैदानी इलाका प्रारम्भ हो जाता था। दोनों अब सड़क के अंत में बनी उस पहाड़ी सुरंग में प्रवेश कर चुके थे। सड़क पर कारों की रेल पेल थी। शोरगुल था ट्रैफिक का और शांति या मौन की आशा यहाँ पूरी तरह नामुमकिन थी, फेल थी।

सुरंग के दूसरी ओर निकल के रमता जोगी ने चिपकु लाल को पूछा, “क्या तुमने अभी अभी “मैं” के दर्शन किये ? इस दम्भी कर्त्ता, इस अभिमानी को देखा, अनुभव किया ? वह यहीं था एक प्रतीक के रूप में। इस टनल के रूप में। जिससे तुम अभी अभी बाहर आये हो। केवल बाहर आ के ही तुम टनल को देख सकते हो। उसके भीतर रहते हुए नहीं। यही ज्ञान आत्मज्ञान है।”

चिपकु लाल भौंचक्का हो कर, ठिठक कर वहीं रुक गया। उसने विस्मय में अपने दोनों हाथ ऊपर उठाये और अपने सिर को पकड़ लिया और मन ही मन खुद से कहा, “ हे भगवान् ! यह जोगी भी अजीब है। रोजमर्रा की चीज़ों और घटनाओं को कहाँ से कहाँ जोड़ देता है ? सुनने वालों को झिंझोड़ देता है। उनके अज्ञान के भ्रामक गुब्बारे अपनी सटीकता और पैनी दृष्टि की सुई से फोड़ देता है।”

फिर उसने जोगी से न समझने की एक्टिंग करते हुए कहा, “जोगी जी ! इस पहेली को समझाएं। इस उदाहरण को विस्तार से बताएं। इस झोल को, इस रूपक गोल मोल को, स्पष्ट करें। हम तो नादान अज्ञानी हैं, हमें समझाने का कष्ट करें।”

रमता जोगी ने एक ज़ोरदार ठहाका लगाया और कहा, “नटखट शैतान हो तुम। एक्टिंग में महान हो तुम। चलो विस्तार से सुनो। ईगो या इंसान का “मैं” एक टनल की तरह ही है। टनल की तरह सीमित और तंग दृष्टि वाला। इसकी दृष्टि की संकीर्णता को ही टनल विज़न

कहते हैं। अपने सोच से इतर यह किसी अन्य विचार को कोई महत्व नहीं देता वैसे ही जैसे टनल से गुजरते हुए हम एक पूर्व निश्चित संकरे मार्ग से ही चलने को विवश होते हैं।

हाँ, स्पीड की दृष्टि से टनल एक बढ़िया विकल्प है। यह समय और श्रम दोनों की बचत बढ़िया तरीके से करती है। लेकिन विशाल परिदृश्य के दर्शन और ज्ञान हेतु यह बेकार है। सम्पूर्ण दृष्टि के लिए हम टनल से बाहर आना ही होता है। यही सत्य है। जब तक "मैं" है तब तक प्रेम नहीं, उच्चतर आयामों तक पहुँच नहीं। कबीर की उक्ति याद तो होगी ही न ?

जब मैं था तब हरी नहीं
अब हरी है मैं नाहीं
सबै अँधियारा मिटि गया
जब दीपक देख्यो माहीं।"

चिपकु लाल ने हाथ जोड़ के रमता जोगी को प्रणाम किया और इस अद्भुत ज्ञान के लिए धन्यवाद दिया और कहा, " मुझे समझ आ गया प्रभु ! इसे कविता रूप में कहता हूँ -

"सिकुड़ते स्पेस से बनता प्रेशर
सिकुड़ते स्पेस से बिगड़ते रिश्ते
सिकुड़ते स्पेस से बढ़ता तापमान
सिकुड़ते स्पेस से हैं सब परेशान।

यह संकीर्ण "मैं" ही सारी समस्याओं का मूल है। इस टनल में ही सफर करते रहना कभी कभी तो ठीक है पर उसमें अपना ठिकाना ही बना लेना - परम भूल है।"

बादल आकाश से उतर कर सड़क पर आ गए थे और टनल के मुहाने पर भी तैर रहे थे। टनल अब अदृश्य हो गयी थी। नैचुरली ज्ञान के बाद "मैं" का लोप हो जाता है। तब ऐसा ही तो प्रतीत होता है। है न ?

सड़क चौड़ी हो कर अब सात लेन की हो चुकी थी। ट्रैफिक अब स्मूथ था। यही तो विशालता की खासियत है - सफर स्मूथ कर देना, जो संकरे स्पेस में संभव ही नहीं। दोनों अब सड़क से उतर कर एक जंगल की ओर मुड़ गए यह गीत गाते हुए -

जब सिर्फ अपनी पड़ी हो
सोच की क्षुद्रता बड़ी हो
तो दूसरे के बुरे हालात
दूसरे के कोमल ज़ज़्बात
हमें नज़र नहीं आते

हर स्ट्रिक्ट डेडलाइन
बन जाती है प्रेशर की लैंड माइन
तो जो नहीं करना था हमें
बदहवासी में हम अक्सर
वो ही हैं कर जाते

ज़िन्दगी में लाना हो सुकून तो
तंगदिली से बाहर आओ,चलें
छोटी सोच, छोटी हरकतों से
खुद को दूर कर आओ ,चलें
आओ चलें ,आओ चलें।

गोल गप्पे

गोल गप्पों का एक स्टाल सड़क के मोड़ पर लगा हुआ था। वहां खाने वालों की अच्छी खासी भीड़ थी। ज्यादातर महिलाएं गोल गप्पे वाले के तीन तरफ गोल घेरे में पत्तल के तिकोने दौने पकड़े खड़ीं थीं। काउंटर पर लगे धूप से ,वही धूप जो पूजा में भी प्रयोग होता है, धुँए की एक लकीर आकाश की ओर जा रही थी।

रमता जोगी और चिपकु लाल भी अपनी बारी की प्रतीक्षा में उस भीड़ से थोड़ा पीछे खड़े हो गए। एक तरफ टिक्कियां सिक रहीं थीं। कुछ लोग दही भल्ले और पापड़ियाँ खा रहे थे।

एक महिला ने कहा, "भैया अब सूजी के रहने देना, आटे के खिलाना। और हाँ, हींग वाला पानी। फिर लास्ट में अमरुद का पानी और खट्टा मीठा। घड़े में देखना, बर्फ कुछ कम डाली है क्या ? मज़ा ही नहीं आ रहा।"

दूसरी ने कहा, "जब हर प्रकार के पानी वाले बतासे हो जाएँ तो लास्ट में एक दहीं भर के भी दे देना।"

रमता जोगी ने चिपकु लाल के कान में फुसफुसा के कहा, " एक दो नहीं ,वैरायटी की पूरी रेंज चाहिये………" और चिपकु से रहा ही नहीं गया बोले बिना। वह ज़ोर से बोल पड़ा , "सबको चेंज चाहिए।" तभी सभी महिलाओं ने अपने मुंह पीछे घुमाये और आश्चर्य से इन दोनों की ओर देखा। फिर वे यथावत गोल गप्पे खाने लगीं।

एक महिला ने एक बड़ा सा गोल गप्पा मुंह में डाला और अपने साथ खड़ी महिला से कहा, "ठीक ही तो बोल रहा था वो घोंचू। चेंज तो सभी को चाहिए। हर जगह चाहिए। हमारे घरों में तो रोज़ नए नाश्ते की लगी रहती है डिमांड। फिर दिन में भी चाहिए अलग अलग डिशेज़। हर एक की हैं अपनी अलग अलग विशेज़। कहाँ से लाएं नित नए व्यंजन? हर पल चाहिए भिन्न और नया मनोरंजन।"

तीसरी ने कहा, “हफ्ते में तीन दिन तो हम बाहर का ही खाते हैं। हर दो तीन महीनों में हिल्स या बीचेस पर घूमने जाते हैं। नहीं तो उस चहारदीवारी में ही क़ैद रहें तो बोर न हो जाएँ ? बोर होएंगे तो खुद को इग्नोर करेंगे और खुद को इग्नोर करेंगे और अपने को बेस्ट नहीं रख पाएंगे। और अगर ऐसा हुआ तो कहीं खुद ही हम, अपने पतियों से इग्नोर न हो जाएँ ?”

गोल गप्पे खा चुकीं सब महिलाएं तो उनकी दृष्टि रमता जोगी पर पड़ी। जिसके चेहरे पर एक अजीब सुकून था। वह शान्ति से खड़ा था। पर उसके बगल वाला तो रेस्टलेस अफलातून था जो इधर उधर देखे जा रहा था और आँखें मटका के बात कर रहा था। पूरा कार्टून था।

एक महिला से रहा न गया और वह रमता जोगी के पास आ के बोली, “माफ़ करना। क्या आप जोगी हैं ? लगते तो वो ही हैं। मुझे सिर्फ एक प्रश्न पूछना है - और वह यह है कि हम बोर होते ही क्यों हैं ? हमें एकरूपता से, हर रोज़ वही , हर रोज़ वही, से इतनी दिक्कत क्यों होती है ? हमें हर चीज़ में चेंज क्यों चाहिए ?”

अब बाकी महिलायें भी वहां आ गयीं थीं। सबने जोगी के चारों ओर घेरा सा बना लिया। रमता जोगी ने कहा, “क्योंकि हम एक निरंतर प्रवाह हैं। हमारे शरीर की समस्त कोशिकाएं, हमारी तंत्रिकाएं ,हमारा खून ,हड्डियां - सभी निरंतर पुनर्नवीन यानी रिपेयर हो रही हैं। हमारे शरीर से ऊर्जाएं बाहर जा रही हैं और भीतर आ रही हैं। परमाणुओं के हज़ारों बादल हमारे शरीरों से रोज वायुमंडल में विलीन हो रहे हैं और उनके बदले नए बादल हमारे शरीरों के सूक्ष्म बिल्डिंग ब्लॉक्स बन के प्रवेश कर रहे हैं।

चूँकि हमारे भीतर कुछ भी नहीं है जो रुके ,थमे, तो हम उसी क्षण बोरियत महसूस करने लग जाते हैं जब या तो बाहरी परिदृश्य रुका हुआ हो ,जैसा कि कुछ देर पहले आप में से ही किसी ने कहा था कि उनका माहौल या परिदृश्य बदले नहीं तो उनका दम घुटने लगता है और या मन को कुछ नया सोचने को न मिले तो भी बोर होते हैं हम। हमारा मन भी विचारों का एक प्रवाह मात्र है। यदि उसे कुछ न करने को मिले तो वह छटपटाता है। इसी बेचैनी को हम लोग बोर होना कहते हैं। आप स्वयं को एक्सप्रेस न कर पाओ तो बोरियत है। मन प्रवाह में न आ पाए तो बोरियत है। परिवर्तन चाहे बाहरी हो चाहे भीतरी, वह मन को चलाये रखता है। पर समस्या यह है कि इतने परिवर्तन कहाँ से लाएं ?”

एक महिला बोली, "कुछ कुछ तिकड़म तो हम लगा लेते हैं परिवर्तन के लिए। जैसे हम रोज नयी ड्रेसेस पहनते हैं। थोड़े थोड़े दिनों में ड्राइंग रूम की सेटिंग चेंज करते हैं जैसे सोफे को यहाँ से वहां कर दिया, परदे चेंज कर देते हैं। पर यह काफी नहीं है।"

यह सुनते ही सभी के चेहरे पर मुस्कान आ गयी क्योंकि यह तो सभी महिलायें करती आयीं हैं। केवल इस ग्रुप की ही नहीं ,पूरे विश्व भर की। एक महिला थोड़ा हिचकिचाते हुए बोली, "अब आपसे क्या छुपाएं ? हमारे पति लोग भी शादी के कुछ अरसे बाद हम से बोर होने लगते हैं, कहने लगते हैं कि हमें चेंज चाहिए। अब नयी अदाएं हम कहाँ से लाएं, इस उम्र में ?" यह सुनते ही सभी महिलायें खिलखिला के हंस पड़ीं। "ठीक बोला, ठीक बोलती हो तुम",एक आवाज़ में सब बोल उठीं।

रमता जोगी ने कहा, "तो समस्या बाहरी इलाज़ से दूर नहीं होगी जैसा कि आपने अभी समझा। इसका निदान भीतरी है। बाहरी चेंज के बजाय भीतरी चेंज करना होगा। हमारा मन हर नयी चीज़ को, हर नए अवसर को, हर नए मौके को, पुराने नज़रिये से देखता है। इस कारण वह जो नया पल था, जो कुछ भी नयी परिस्थिति थी, उसे भी बासी या पुराना कर देता है। तो हम क्या करें ? अपने पति को, पत्नी को, घर को, सभी उन लोगों या वस्तुओं को, यदि हम नए चश्मे से देखें अर्थात ऐसे देखें जैसे वो व्यक्ति या वस्तु पहली बार देखी जा रही हो तो उसमें एक ताज़गी, एक विस्मय, एक जादू, फिर से पैदा होगा, जो जादू या वंडर प्रत्येक नयी चीज़ में होता है।

मैं तो ऐसे ही रहता हूँ। यह कोई कोरी फिलॉसोफी नहीं है। मेरा रोज़ का जीने का यही तरीका है। अभी जब मैं उन गोल गप्पों को खाने जाऊँगा तो मुझे किसी पुराने खाये हुए गोलगप्पों की यादें डिस्टर्ब या प्रभावित नहीं करेगीं। नहीं तो मुझे ये गोलगप्पे या तो पिछले वालों से बुरे लगेंगें और या बेहतर लगेंगें। दोनों ही फीलिंग्स मिथ्या हैं क्योंकि एकमात्र सत्य यह है कि वो गोलगप्पे अब यहाँ नहीं हैं और "जो मेरे सामने है" वही मेरे लिए एकमात्र सच्चाई है ,फैक्ट है। मेमोरीज तो नॉन फैक्ट हैं। सत्य तो केवल वर्तमान में ही होता है। और वर्तमान की ताज़गी में बासी स्मृति की कोई जगह नहीं बनती। जो नित नया है , उसे चेंज क्यों चाहिए भला ? याद रखना चेंज तो सिर्फ पुराने को ही चाहिए होता है।

तो नित्य नवीन रहो। नित नवीनता हर तरफ देखो जैसे कि उसे पहली बार देख रहे हो। और प्यार तो केवल प्रथम बोध का नाम है। प्रथम दृष्टि में ही प्यार है। रिपीटिशन या पुनरावृत्ति तो प्यार नहीं। वह तो लालसा है। लालसा सदा अतीत से जन्म लेती है ,प्यार नहीं। यह ज्ञान ही बोरडम को मिटा देने का ब्रह्मास्त्र है। नहीं तो एक और, एक और की ललक रहेगी और हम नवीनता की तलाश उन चीज़ों या लोगों में करते ही रहेंगे जो खुद बासी हैं, बासीपन की बोरियत से त्रस्त हैं।"

यह सब सुन के सभी महिलाओं की आँखों में एक चमक सी आ गयी थी। उन्हें शायद रोजमर्रा की अपनी परेशानी का हल मिल चुका था। रमता जोगी और चिपकु लाल अब गोलगप्पे खाने के लिए फिर से लाइन में लग गए थे। लेकिन इस में "फिर से" वाला कोई मामला न था। ये गोलगप्पे तो बिलकुल नए थे। यह पल बिल्कुल नया था। इस पल से पहले और इस पल के बाद सृष्टि में कुछ नहीं था। इसीलिए यह पल अद्धितीय था।

कुछ ही देर में रमता जोगी और चिपकु लाल उस गोलगप्पे वाले के स्टॉल से उस सड़क की ओर बढ़ चले जो सीधी चढ़ाई से एक ऊँचे शिखर तक जाती थी। वहां एक बस अड्डा भी था जहाँ से हर तरफ के लिए बसें और टैक्सियां उपलब्ध थीं। इन दोनों को एक बस पकड़नी थी क्योंकि एक पहाड़ी कस्बे में उनके स्वागत सत्कार के लिए एक आयोजन किया गया था।

रमता जोगी ने सीधी ऊँची सड़क पर चढ़ते हुए एक गीत गुनगुनाना शुरू कर दिया। चिपकु लाल के लिए गाना संभव न था क्योंकि वह अब तक हांफने लग गया था। उसकी सांस बड़ी तेज़ गति से चल रही थी और वह थका लग रहा था।

रमता जोगी ने यह गीत गुनगुनाया -

कण कण कर रहा है नृत्य
ज़र्रे ज़र्रे को नर्तन चाहिए
समय - भंवर में फंसे मन को
सतत परिवर्तन चाहिए

मोह नहीं चाहता कोई बदलाव
मधुर पलों से हो कोई अलगाव
लेकिन उथली वर्तमान चेतना को
अभीष्ट है सिर्फ नवीन प्रवाह

सबको इस दुनिया में चेंज चाहिए
अलग अनुभवों की रेंज चाहिए
फेंक पुराने चश्मे और फ़िल्टर
नित नवीनता सर्वत्र पाओ,चलें

आओ चलें, आओ चलें
आओ चलें, आओ चलें।

टायर पंक्चर

रमता जोगी और चिपकू लाल अब एक पहाड़ी बस में सफर कर रहे थे। दोनों को एक पर्वतीय समारोह में जाना था जहाँ रमता जोगी के अभिनन्दन हेतु आयोजन किया गया था। जब वह आयोजन स्थल कुछ दूर रह गया था तो बस का एक टायर पंक्चर हो गया। बस ड्राइवर ने घोषणा की कि उसके पास न कोई स्पेयर टायर है और न कोई जैक इत्यादि उपकरण। यदि वहां से गुजर रहा कोई परिचित ड्राइवर इसे स्पेयर टायर दे भी देता तो भी कोई लाभ न होता। सभी यात्री अब इस ऐसी विकट परिस्थिति में फंस चुके थे जिससे निकलने का कोई मार्ग नहीं सूझ रहा था।

रमता जोगी और चिपकु लाल बस से उतर कर सड़क के किनारे बने बैरियर पर जा बैठे और दूर तक फैली पर्वतीय घाटियों को निहारने लगे।

रमता जोगी ने चिपकु से कहा , “यह गतिरोध हमें क्या सिखाता है ?”

चिपकू लाल बोला, “यही कि अवरोध है प्रवाह का क्षणिक अंत। और प्रवाह में रुकावट ही तनाव है। यह दुःख से बस एक कदम पहले की अवस्था ही है। जब यह अवरोध कभी ख़त्म न होने वाला लगने लगेगा तो यह बेचैनी दुःख में परिवर्तित हो जायेगी । जब तक आस है, तब तक मन तनाव में है, हताश है, उदास है। मन या तो कोई यात्रा शुरू ही नहीं करे। और करे तो अंत तक जाए, मंज़िल तक निर्विघ्न पहुंचे। यह जो बीच की अनिश्चितता है, यही तो दिल को सालती है, असमंजस में मारे डालती है। यही टेंशन है।”

रमता जोगी ने कहना शुरू किया , “जो हम चाहें ,वही हो जाए, तो सुख है। और जो हम न चाहें वो हो जाये तो दुःख है। अब यदि यह चाह और नापसंदगी दोनों ही न हों तो सुख और दुःख फिर कहाँ हैं ? पसंद और नापसंद दोनों ही अवशिष्ट हैं ,कुछ बासी स्मृतियाँ हैं, कुछ पुराने अधकचरे निर्णय हैं। वर्तमान में प्रस्तुत हो गयी परिस्थितियों - अब वो चाहे अनुकूल हों या प्रतिकूल - को सम्पूर्णता से स्वीकार करना, आदरपूर्वक समभाव से ग्रहण करना ही वर्तमान में रहना है। वर्तमान में ही रहना है चेतना का वह ईश्वरीय प्रवाह, वह ईश -

इच्छा,जिसे हम इस गीत से व्यक्त करते हैं - आओ चलें। आओ चलें - जिसका भाव है - कहीं पीछे मुड़ के न देखें , कहीं किसी प्रभाव से प्रभावित न हों, केवल स्वयं से ही स्फूर्त हों, स्वयं से ही चलें। जब हम वैचारिक गुलामी या मनोवृत्तियों के पाश से मुक्त होते हैं और विचारों में ही नहीं चलते तब हम चेतना में चलते हैं। और चेतना में चलना ही है बोध , यही है ध्यान, यही है प्रेम, यही है वह दिव्य प्रवाह, जिसके बारे में सभी से हम कहते आये हैं , सबको बताते आये हैं - आओ चलें, आओ चलें।"

चिपकू लाल बोला, "लेकिन एक प्रश्न है। विचार ही न होंगे तो फिर हम क्या करें ? क्या कोई प्रयत्न ही न करें ? बिना चिंतन के समस्या कैसे हल होगी ?"

रमता जोगी ने उत्तर दिया, " मैंने यह तो नहीं कहा कि सोच - विचार न करो। मैं तो बस यह कह रहा हूँ कि पूर्वाग्रहों से बचो।

जब हम सारे यत्न कर लें और कोई हल नज़र न आ रहा हो तो फिर क्या करें ? क्या तब टेंशन में आएं, हताश हों, व्यग्र हो जाएँ ? अभी टायर पंक्चर है, जैक इत्यादि भी नहीं है। मानवीय बुद्धि इससे अधिक की यात्रा नहीं कर सकती, आगे की नहीं सोच सकती। कोई मार्ग नहीं सूझ पा रहा। जितना सोचेंगे उतना ही गोल गोल विचारों के गलियारों में घूमते रह जाएंगे, सिर भन्नायेगा और ऊर्जा क्षीण ही होगी। तो क्या करें ? आओ चलें।

कैसे ? ऊँचे आयाम में चलें। "क्या संभव है" के विचार द्वारा संकुचित और कुंठित न हों। अनंत चेतना के पास अनंत योजना और समाधान है। वहां कुछ भी असंभव नहीं। इसके बारे में आप नहीं जानते , जान भी नहीं सकते। बस आप गेयर चेंज करें। कुछ मिनटों में आप किस सुखद परिस्थित में बैठे होंगे,वह देखिये, वह मंजर "महसूस" कीजिये। मैं यह नहीं कह रहा हूँ कि सोचिये। मैं कह रहा हूँ - फील करें कि आप एक समस्या रहित सुखद स्थिति में आ चुके हैं।

क्योंकि तार्किक दृष्टि से भी जीवन भर या अनंत काल तक तो यहाँ आप बैठे या अटके रहने वाले हो नहीं। तो सच यही है। विचारों के सीमित दायरे से ऊपर उठ के जब आप आँखें खोलते हैं तो वह विस्तृत और सुन्दर नज़ारा देखते हैं जो निचले स्तर पर आपको कभी दिखने

वाला नहीं था। जब भी आप किसी विकट परिस्थिति या गतिरोध में पड़ जाएँ तो यह बोलिये खुद से -

रौशनी में जीवन बसर करना है
इक किरण से नहीं सबर करना है
रुकी हुई हैं सारी राहें मगर
हमें फिर भी सफर करना है।"

सड़क पर गाड़ियां आती रहीं, जाती रहीं। किसी बस वाले ने स्पेयर टायर देना भी चाहा तो भी बात नहीं बनी क्योंकि जैक भी वो दे और टायर भी दे - ऐसी उदार भावना किसी में नहीं थी। चिपकु लाल ने रमता जोगी को ध्यान मग्न अवस्था में ऊपर आकाश की ओर अपने हाथ को गोल गोल घुमाते और कुछ बुदबुदाते देखा।

तभी एक जीप, जिसे एक नवयुवक चला रहा था, वहां आ के रुक गयी और उस नवयुवक ने उनसे पूछा कि वह उनकी कोई मदद कर सकता है ?

"बिल्कुल कर सकते हो, हम आप ही की तो प्रतीक्षा में थे", रमता जोगी ने उस युवक से, हँसते हुए कहा। फिर अपनी विपदा उस युवक से साझा की। और आश्चर्य ! वह युवक उनकी सहायता करने को ख़ुशी ख़ुशी राज़ी हो गया।

आधे घंटे के भीतर ही रमता जोगी और चिपकु लाल अपने गंतव्य स्थल पर मंच पर बैठे आयोजकों का आतिथ्य सत्कार स्वीकार कर रहे थे।

और वह बस ? वह अपने यात्रिओं के साथ वहीं अटकी थी। हो सकता है बाद में कोई न कोई मदद यात्रियों और ड्राइवर को भी मिल गयी हो। लेकिन उनकी मदद आने में देर क्यों हुई ? क्योंकि बस के तर्कपूर्ण और बुद्धिवादी यात्रियों ने अपने भयग्रस्त मनों द्वारा यह निष्कर्ष निश्चित ही कर लिया था कि उनकी विकट परिस्थिति का कोई हल नहीं है और उन्हें इस से निकलने में काफी वक़्त लग सकता है क्योंकि "स्थितियां हीं ऐसी थीं।" जब हम मान बैठते हैं कि अब कुछ नहीं हो सकता तो नियति भी, जो सहायता के लिए उद्यत थी, ठिठक जाती है और फिर आराम से बैठ जाती है। तथास्तु।

वे भी वहां से निकल सकते थे यदि उनके तनाव ग्रस्त मनों ने भी तर्क की सीमित दृष्टि से परे देखा होता और दिल की गहरायिओं में यह गीत गाया होता -

“आओ चलें ,आओ चलें
आओ चलें ,आओ चलें

ऐसा कोई प्रश्न नहीं
जिसका समाधान न हो

ऐसा कोई अवरोध नहीं
जहाँ से आगे प्रस्थान न हो

रास्ते बंद हो तो घबराना कैसा
कोई और पथ ढूंढ लाओ, चलें

नहीं तो नया पथ बनाओ चलें
आओ चलें, आओ चलें।”

देशी घी

वह चौबीस पचीस वर्ष की एक नवयुवती थी। उसने जीन्स की पैंट और येलो टॉप पहना हुआ था। उसके बाल कन्धों पर थे और माथे पर सन ग्लासेज। शहर की गली में बने लाल रंग के उस आश्रम के द्वार पर ही एक स्वामीजी कुर्सी पर विराजमान दिखाई दिए। उस नवयुवती ने प्रणाम कर के उन साधू महाराज से कहा कि उसे कुछ आध्यात्मिक समस्या का निराकरण करना है इसीलिए वह आश्रम आयी है यह सोच के, कि यहाँ उसकी समस्या का समाधान शायद हो ही जाए। साधू महाराज ने कहा कि वे सिर्फ ध्यान साधना करते हैं और किसी मसले पर व्याख्यान या प्रवचन नहीं देते। उनके पास कम शब्द हैं क्योंकि वे सिर्फ अर्थ पर ही ध्यान रत रहते हैं। यदि उसे अपने प्रश्न का उत्तर चाहिए तो उसे आश्रम के अंदर मुख्य हॉल में जाना होगा जहाँ रमता जोगी कुछ शिष्यों को कुछ समझा रहे हैं। वहां से वह खाली हाथ न लौटेगी।

वह नवयुवती हॉल की ओर बढ़ गयी। वहां तीस चालीस श्रोता बैठे थे। वह भी उनके बीच जा के बैठ गयी। जब प्रवचन समाप्त हुआ तो रमता जोगी ने उसको सम्बोधित करते हुए कहा, "तुम एक राजनैतिक संस्था की अध्यक्षा हो और मन में घुमड़ने वाले अनेकों प्रश्नों से त्रस्त हो। तुम कोई प्रश्न पूछने नहीं आई हो। बस तुम इस ओवर थिंकिंग से कैसे बचें , इसका तरीका पूछने आयी हो। है कि नहीं ?"

वह युवती तो अवाक ही रह गयी। कुछ बोलते न बन पाया उससे। फिर कुछ पलों में उसने खुद को संयत किया और कहा, " मैं वास्तव में दंग हूँ कि आखिर बिना किसी के अपने बारे में बताये, कोई कैसे किसी के बारे में बता सकता है ? यह तो अद्भुत मानसिक शक्ति है। लेकिन मैं मानसिक नहीं आधात्मिक मुद्दे के हल के लिए आयी हूँ। समस्या यह है कि आध्यात्मिक समस्या का रास्ता भी मानसिक फील्ड से ही हो के गुजरता है। अति चिंतन यानी ओवर थिंकिंग के कारण मैं अपने मन के जल्दी से मोहग्रस्त हो जाने का निदान भी नहीं ढूढ़ पा रही हूँ। कृपया आप मेरी मदद करें जोगी जी।"

रमता जोगी ने शांति से उसकी पूरी बात सुनी।

फिर यह कहा , “आपकी मानसिक और आध्यात्मिक ये दोनों समस्याएं वस्तुत: अलग नहीं, बल्कि एक ही थैली के चट्टे बट्टे हैं। मोह चिपकाव है। और हम परिणाम के प्रति ज़रूरत से ज्यादा आशंकित रहते हैं, इसीलिए ओवर थिंकिंग करते हैं।

मन सोचे बगैर नहीं रह सकता। लेकिन उसे वर्तमान में एकाग्र किया जा सकता है। एकाग्र मन जागृत हो तो समस्त से जुड़ जाता है जबकि खंडित मन केवल एक सीमित संकरे मार्ग पर ही चल पाता है। उदाहरणार्थ एक गली में चलते हुआ व्यक्ति की दृष्टि विस्तृत नहीं हो पाती और वह सिर्फ गली से जुड़ाव पैदा कर लेता है क्योंकि सीमित व्यवस्थाओं में पुनरावृत्ति के अलावा कोई और चारा नहीं होता।

बारम्बारता से मोह होता है। मोह से फिर बारम्बारता होती है। ये दोनों परस्पर एक दूजे के कारण भी हैं और परिणाम भी। यदि हम गली से निकल के खुले मैदान में आ जाएँ तो वहां कई मार्ग संभव हो सकते हैं जिस कारण किसी एक से मोह नहीं हो सकता क्योंकि सिर्फ सीमित से ही मोह संभव है। मोह से ओवर थिंकिंग और ओवर थिंकिंग से मोह होता है।”

“ओह माय गॉड ! कितना कठिन उपदेश दिया आपने ? मुझे तो कुछ समझ ही नहीं आया। मेरे सिर के उपर से ही गुजर गया सब। क्या आप सरल भाषा का प्रयोग नहीं कर सकते ? मेरी समस्या केवल यह है कि मैं बहुत सोचती हूँ। कुछ ज्यादा ही सोचती हूँ। ज्यादा सोचती हूँ तो ज्यादा प्रश्न भी पैदा हो जाते हैं। ऐसा भी तो हो सकता है कि प्रश्न ही इतने ज्यादा हो गए हैं कि मैं ज्यादा सोचने लग गयी हूँ। सब एक चक्र है। एक से दूसरा पैदा हो रहा है। फिर उससे वापिस पहला पैदा हो रहा है। क्या यह मेरी इमेच्योरिटी है ?” वह नवयुवती भावुक हो चली थी।

रमता जोगी कुछ देर शांत बैठा रहा फिर उसने उसे आगे की पंक्ति में आ के बैठने के लिए इशारा किया। जब वह युवती आगे आ के बैठ गयी तो रमता जोगी ने उस से अचानक एक ऐसा प्रश्न पूछ लिया जो सुनने में नितांत अप्रासंगिक लग रहा था।

जोगी ने पूछा, “क्या तुमने कभी घी बनाया है ? देसी घी ? खुद ?”

नवयुवती, “जी हाँ। बनाया है।”

जोगी, "किस चीज़ से बनाया है ?"

नवयुवती, "मलाई से। पहले कढ़ाई में मलाई डाल के गैस पर चढ़ा दी। फिर उसे कड़छी से लगातार चलाते रहे......"

जोगी, "अरे ठहरो, रुको ज़रा ! इतनी भी क्या जल्दी है ? क्या तुमने नोट नहीं किया कि

शुरु में मलाई कढ़ाई की दीवार से चिपक रही होती है ? क्यों ? क्योंकि अभी वह अपरिपक्व है। वह अपरिपक्व है ठीक वैसे ही जैसी अभी तुम हो। तुम भी मोह ग्रस्त हो और वह भी चिपक रही है।"

नवयुवती, "इस मोह का कारण क्या है ?"

जोगी, "मोह का कारण पानी की उपस्थिति है। पानी जो मलाई के सन्दर्भ में एक विजातीय द्रव है। क्योंकि मलाई और घी तो सजातीय हो सकते हैं पर मलाई और पानी नहीं। सजातीय मोह दरअसल मोह है ही नहीं। मोह तो सदा विपरीत से ही होता है जैसे सत्य का असत्य से, नेगेटिव का पॉजिटिव से, ज्ञात का अज्ञात से। समस्या ऐसे ही मोह की है। तो जब तक इंसान अपरिपक्व होता है वह ओवर थिंकिंग करता है क्योंकि वह मोहित हो जाता है भविष्य के प्रति। वह निश्चितता चाहता है। अति सुरक्षा की भावना हमें मज़बूर करती है कि हम वस्तुओं, व्यक्तियों या स्थितियों से चिपक जाएँ यानी उनमें सुरक्षा ढूढें। जिस चद्दर के नीचे हम घुस के सो रहे होते हैं उसे कस के पकड़ें या अपना चेहरा भी चद्दर के अंदर छिपा लें जब तक काल्पनिक भय विद्यमान रहता है। क्या तुमने नहीं देखा कि डर लगने पर हम, किसी भी चीज़ को, जो वहां उपलब्ध होती है, कस के पकड़ लेते हैं? उसी तरह विचारों को भी कस के पकड़ लेते हैं। जब स्पेस कम होता जाता है तो किसी भी सिस्टम के भीतर की चीज़ें तेज़ी पकड़ लेती हैं जैसे हम यदि किसी कंटेनर को कंप्रेस करें तो उसके भीतर स्थित किसी वस्तु या हवा के परमाणु अधिक तीव्र कम्पन करने लगते हैं और वहां ऊष्मा बढ़ जाती है। ऐसे ही मन में यदि शांति, धैर्य और सजगता की कमी है तो मानसिक स्पेस कम होने के कारण विचारों की गतिशीलता बढ़ जाती है जिसे हम सभी ओवर थिंकिंग के नाम से जानते हैं।"

नवयुवती, "फिर घी वाले दृष्टान्त पर लौटते हैं। आपके इतने बढ़िया उदाहरणों से मुझे यह तो स्पष्ट हो ही गया है कि यदि मैं क्लटर्ड माइंड, यानी विचारों से ठूंस ठूंस के भरा हुआ मन,

रखूंगी तो स्पेस की कमी से अति चिंतन की बिमारी तो होगी ही। इसे ही हम अपरिपक़्वता कह सकते हैं। लेकिन परिपक्वता आये कैसे ? शांति ,धैर्य और सजगता कैसे हो ?"

रमता जोगी, "जब घी बनाने की प्रक्रिया में हम कड़छी चला रहे होते हैं तो एक प्रकार से मलाई से मोह छीन रहे होते हैं। कड़छी चालन गतिशीलता है, प्रवाह है, और प्रवाह मोह का शत्रु है। कहते हैं न – "बहते पानी में कभी काई नहीं जमती". ध्यान केंद्रित करेंगे तो सजगता होती है।

ध्यान की ऊष्मा में मोह उसी प्रकार उड़ जाता है जैसे कड़ाई के नीचे जल रही आग, मलाई में उपस्थित मोह स्वरुप पानी को उड़ा देती है।

नोट करो – पानी के लुप्त होते ही मलाई कड़ाई से चिपकना छोड़ देती है और घी प्रकट होना शुरू हो जाता है। घी तो सदा वहीं था, सदा वर्तमान था। पर जब तक मलाई में पानी की उपस्थिति थी, वह स्वयं को प्रकट नहीं कर पा रहा था।

शांति तभी प्रकट होती है जब मोह जनित क्रियाएं समाप्त हो जाएँ। सजगता भी तभी होती है जब एकाग्रता हो और एकाग्रता तब होती है जब किसी किस्म की कोईजल्दबाज़ी न हो, जब धैर्य हो। धैर्य ही परिपक्वता है। परिपक्वता का घी तभी प्रकट होगा जब मन अनावश्यक रुप से चिपकना बंद कर दे, जब मोह रुपी पानी सूख जाए।"

नवयुवती ने रमता जोगी को आदर पूर्वक प्रणाम किया और यह कहते हुए वहां से चली गयी कि अब उसे पता चल गया है कि मन को सदा प्रवाह में , सदा वर्तमान में , सदा ऊर्जा में रखना ही मन की ऐसी कड़छी चलाना है जिस से मन कहीं चिपकेगा नहीं और ओवर थिंकिंग तो मन के तरह तरह की भ्रामक संभावनाओं से चिपक जाने के फलस्वरुप दिमाग की ओवर एक्टिविटी का नतीजा है।

आश्रम के मेन गेट पर बैठे स्वामी जी ने उस नवयुवती से पूछा, " क्यों हुआ तुम्हारी समस्या का समाधान ? हुआ न ? मैंने पहले ही कहा था तुमको कि तुम अंदर चली जाओ। तुम खाली हाथ नहीं लौटोगी। ऐसा ही हुआ न ?"

आश्रम के भीतर रमता जोगी और चिपकु लाल के गाने की आवाज़ आने लगी थी। दोनों गा रहे थे –

जब तक यह मोह का श्लेष है
तब तक बेचैनी है, क्लेश है

आओ चलें का मन्त्र है पूर्णाहुति
सड़ने लगता है वह जो शेष है

मोह रूपी कब्ज को हटाओ,चलें
आओ चलें, आओ चलें

अवशिष्ट से जन्मती सब बीमारियां
एवं ओवर थिंकिंग की चिंगारियां

प्रवाह को फिर से बहाओ, चलें
आओ चलें, आओ चलें।

जल्दबाज़ी

सड़क के किनारे बेंच पर रमता जोगी और चिपकु लाल बैठे थे। तभी जोगी ने झुक कर अख़बार का एक टुकड़ा ज़मीन से उठाया जो हवा से उड़ता हुआ वहां आ पहुंचा था। उस टुकड़े में एक न्यूज़ थी। एक तुरंत फुरंत फैसले की और मानवीय बेवकूफी की।

न्यूज़ में था कि एक आदमी ने बिलकुल नयी इम्पोर्टेड कार खरीदी थी जो काफी महँगी थी।

शाम को ऑफिस से घर लौटने पर उस आदमी ने नोटिस किया कि उसकी चमचमाती नयी कार के पिछले हिस्से पर एक बड़े से स्क्रैच का निशान था। उस आदमी के हाथ से हैंड बैग और ऑफिस की फाइलें छूट कर नीचे गिर गयीं और वह भी नीचे बदहवास सा नीचे ज़मीन पर बैठ गया। यह क्या हो गया ? उसके घुटने जवाब दे गए और उसकी टांगें अब उसका बोझ सहन नहीं कर पा रहीं थीं। वह रोने को हुआ। तभी उसने अपने चार वर्षीय पुत्र को एक नुकीली सी वस्तु लिए कार के निकट देखा। फिर क्या था ? अब उसका दुःख क्रोध में बदल चूका था। तो असली अपराधी यह दुष्ट था ? अपना ही खून ?

क्रोध के पागलपन और इस असहनीय नुक्सान के कारण असंतुलित हो गए मन के वशीभूत हो के उसने अपने अबोध बालक को इतना पीटा कि उसकी बहुत सी हड्डियां टूट गयीं। लोग उस मासूम को तुरंत अस्पताल ले गए। लेकिन उस आदमी को कोई पश्चाताप न था। उसके दिल में यह ठंडा और कॅल्क्युलेटेड निष्कर्ष था कि उस बच्चे ने काम ही ऐसा किया था। अस्तु उसे ऐसी सजा मिलनी न्यायोचित थी।

जब वह आदमी थोड़ा संयत हुआ तो उसने सोचा कि चलो उस स्क्रैच को देखते हैं कि नुक्सान आखिर है कितना ? वहां जो उसने देखा, उसे देख कर वह धड़ाम से ज़मीन पर जा गिरा और पागलों की तरह गुमसुम सा हो गया। उसने अपना सिर पकड़ लिया। उसकी आँखों से आंसुओं का एक ऐसा सैलाब बह निकला जो अब पूरी तरह जल्द ही बंद नहीं होने वाला था।

उस स्क्रैच में उसके प्यारे से मासूम बच्चे ने यह उकेरा था – आई लव यू पापा।

क्योंकि यह कार उसी की फरमाइश पर उसके पापा ने खरीदी थी और एक बड़ा लोन लिया था। बच्चा उसके इस प्यार के प्रति अपनी कृतज्ञता का इजहार करना चाहता था। यह अलग बात है कि उसकी अबोध बुद्धि ने इस के लिए ऐसा तरीका सोचा और चुना जो बेशक ग़लत था लेकिन उसे अपना यह काम कम से कम ग़लत तो बिलकुल नहीं ही लगा होगा। नहीं तो वह ऐसा करता ही क्यों ? वह तो बल्कि अपने मासूम और सरल हृदय से यह माने बैठा था कि उसकी कृतज्ञता दिखाने का यह इनोवेटिव तरीका उसके पिता को पसंद आएगा और वह उसे प्यार से गोद में उठा लेंगें और उसे खूब प्यार करेंगें।

पिता की गलती सिर्फ यह थी कि उसकी प्रतिक्रिया तुरंत और बिना सोची समझी थी। प्रतिक्रियाएं अक्सर तीव्र होती हैं और अक़्ल की अनुमति और उसके विश्लेषण के बिना ही होती हैं। रमता जोगी की आँखों में इस न्यूज़ के फलस्वरुप आंसू तैर आये थे। चिपकु लाल को यह देख के बड़ा आश्चर्य हुआ। घोर आश्चर्य ! मन पर और भावनाओं पर विजय प्राप्त किया हुआ एक सिद्ध जोगी द्रवित हो रहा था। पिघल रहा था। यह कैसे हुआ ?

रमता जोगी ने उसके मन के प्रश्नों को पढ़ लिया और उसे स्नेहपूर्वक कहा, " सुनो भई। कोई भी निष्कर्ष बना लेना भी एक प्रकार का रुकाव है, क्योंकि इसमें अतीत से फ़िल्टर करके उसकी सहमति या असहमति से विचार बना लेना - मान्यताओं का प्रभाव है। आध्यात्मिकता हमें पत्थरदिल, असंवेदनशील इंसान नहीं बनाती। यह तो हमारी संवेदनाओं को परिष्कृत करने और विस्तृत करने की प्रक्रिया है।

तो मैं द्रवित हुआ हूँ। लेकिन अब आगे बढ़ गया हूँ। लोग पिछली ध्वनियों के कम्पनों को बहुत समय तक महसूस करते रहते हैं ,उनसे उद्वेलित और प्रभावित होते रहते हैं। पिछले पल के प्रति उचित बोधजनित प्रतिक्रिया कर के आगे बढ़ जाना ही "वर्तमान के प्रवाह" में रहना है। और इस प्रकार जीना ही समय रहित होना है। क्योंकि अतीत अप्रभावी है और भविष्य की कल्पनाओं की वीथियों में जाना है नहीं। तो फिर यहाँ है ही क्या ? यहाँ सिर्फ अंतहीन असीम वर्तमान है। इसी आयाम में हम जिए जाते हैं। इसी के गीत हम गाते हैं। और वह इतना सरल है। आज की भाषा में कहें तो इतना कूल है। लेकिन समस्त ज्ञान का, ऋषियों के अनुसन्धान का यह एक अति सूक्ष्म कैप्सूल है।

तो आओ फिर वही गीत गायें -

“उतावले हुए तो उत्पात होगा
नासमझी होगी तो विवाद होगा

वोल्टेज हुई प्रचंड तो
इलेक्ट्रिक यंत्र पगलायेंगें

करना था कुछ और
लेकिन कर कुछ और जाएंगें

विश्व में सब होता है टाइम से
जल्दबाज़ी से नहीं चलती प्रकृति

हुई हैं सब्र से महान उपलब्धियां
और बदहवासी से केवल विकृति

हर दर्द हर पीड़ा है अतीत – अवशिष्ट
उसे गंगा जी में बहाओ चलें

आओ चलें ,आओ चलें
आओ चलें ,आओ चलें।”

बहता पानी

गली एक मोड़ पर ख़त्म होती थी और वहां नीचे ढलान पर एक नदी बह रही थी। इसके किनारे दो चार मंदिर थे जहाँ श्रद्धालुओं का ताँता लगातार लगा रहता था। रमता जोगी और चिपकु लाल इस पवित्र नदी के किनारे बने घाट पर बनी सीढ़ियों पर जा बैठे। कुछ भक्त गण पत्ते के दौनों में पुष्प,धूप ,एक जलता हुआ दिया और कुछ भोग सामग्री रख के उन्हें नदी में आगे प्रवाह की ओर धकेल रहे थे। कुछ बच्चे नदी में घुस के लहरों से खेल रहे थे।

एक अंग्रेज सीढ़ियों पर रमता जोगी के निकट ही बैठा हुआ यह सब कौतुहल से देख रहा था। वह शायद आर्मी से रिटायर्ड कोई जांबाज़ था। उसने फेल्ट हैट ,आर्मी ग्रीन खुली जैकेट और जंगल सफारी वाली घुटने तक लम्बी नेकर पहनी थी। उसके चेहरे पर हलकी दाढ़ी थी और एक बेफिक्री का अंदाज़ था।

“हाउ फनी ! ये इंडियन लोग भी कुछ ज्यादा ही इमोशनल होते हैं। पानी की पूजा कर रहे हैं ! देखो तो ? और उस सामने के मंदिर में रखे, एक स्टोन की पूजा कर रहे हैं। जमीं पर लेट के साष्टांग कर रहे हैं, लोट पोट हो रहे हैं। साइंटिफिक दृष्टिकोण रखा होता तो उनकी ज़िंदगियाँ कुछ बेहतर होतीं।” अंग्रेज़ ने रमता जोगी की ओर मुड़ते हुए कहा।

रमता जोगी चुप रहा। अंग्रेज ने कहा , “क्या मैं आपका नाम जान सकता हूँ ?”

रमता जोगी ने कहा, “ मैं हूँ रमता जोगी। मैं हूँ बहता पानी।”

अंग्रेज़ हैरान हुआ ,परेशान हुआ,“ यह क्या हुआ ? या तो आप रमता जोगी हो और या बहता पानी हो ? क्या हो आप ? क्या बहता पानी आपका सरनेम है ? आई ऍम टोटली कन्फ्यूज्ड।”

रमता जोगी ने कहा, “अब आप शांति से सुनो। हम भारतीयों को कोई मतिभ्रम नहीं है क्योंकि हमारी वैज्ञानिक उपलब्धियां और वैज्ञानिक सोच दुनिया में किसी से भी कम नहीं है। “लोग क्या कहेंगे, क्या सोचेंगें” - की हमें कोई चिंता नहीं है, कोई शर्म नहीं है।”

अंग्रेज ने अपनी ठुड्डी खुजायी और कहा, " अच्छा ? तो ?"

रमता जोगी ने नदी की ओर इशारा करते हुए कहा, "हम नदी की नहीं उसमें गतिशील प्रवाह की पूजा करते हैं। आपने देखा ही है न, अभी कैसे पत्ते के दौने प्रवाहित किये गए ? अस्थियों को भी हम नदी में प्रवाहित करते हैं क्योंकि हम जानते हैं कि प्रवाह ही जीवन है। हम इसी प्रवाह को लक्ष्मी और सरस्वती देवियों के रूप में पूजते हैं। इन देवियों ने ही यह दुनिया साधी है, प्रवाह से बाँधी है, क्योंकि धन का प्रवाह न हो तो फिर जीवन में आर्थिक व्याधि है।"

उस अंग्रेज ने सब कुछ ध्यान से सुना और फिर एक सिगार सुलगा लिया और उसके धुँए को गोल गोल छल्लों के रूप में बनाते हुए बोला, " ये तो आपकी मान्यताएं हो गयीं। इनका विज्ञान से क्या लेना देना ?"

रमता जोगी ने बोलना ज़ारी रखा, " थोड़ा सब्र करो। रुको ज़रा। अब जो मैं कह रहा हूँ उसे ध्यान से सुनो आप। विचारों का प्रवाह रुक जाए तो बड़ी टेंशन है, टेंशन में होता है रक्तचाप। रक्त का प्रवाह बाधित हो तो पैरालिसिस हो सकता है,क्लॉट्स बन जाएँ तो हार्ट अटैक आ सकता है। प्रवाह में मंदी ही समस्त व्याधियों का बेसिस है।

गट में भोजन का प्रवाह न हो तो कब्ज़ हो जाए, जो लगभग शरीर की अस्सी प्रतिशत बिमारियों का स्रोत है। रिश्तेदारों या मित्रों में आना जाना यानि प्रवाह न हो तो रिश्ते ही टूट जाएँ। आयात निर्यात का प्रवाह रुके तो इकॉनमी रूठ जाए। और कितने उदहारण दूँ ?

तो इस नदी पूजन के प्रतीक के रूप में हम सदा स्वयं को सचेत करते रहते हैं कि प्रवाह का ध्यान रखना है। अनंत को मन नहीं जान सकता। यह भारतियों ने भलीभांति बूझा है। विचार यदि अनंत को स्पर्श करना चाहे तो उसे अनंत की एक मूर्ति या छवि बनानी ही पड़ेगी। तो ठोस पत्थर की मूर्ति के पीछे नृत्यमान अणुओं और परमाणुओं के प्रवाह को, जिसे आप क्वांटम वेव भी कह सकते हैं, उस प्रवाह को ही हमने ठोस प्रतिमा या बहती नदी के रूप में पूजा है।

मैं कौन हूँ ? मैं चेतना का एक प्रवाह हूँ। तो मैं बहता पानी हूँ ,बहते पानी की तरह हूँ। मैं वो अव्यक्त हूँ जो व्यक्त हो जाता है। अतीत के ठोस अंधकार और भविष्य की अस्पष्ट संभाव्यता के बीच - मैं नित्य वर्तमान हूँ। जो वर्तमान में ही स्थित रहे तो वह खंडित या विभक्त नहीं

बल्कि अखंड और भक्त हो जाता है। यही भक्त होने का अर्थ है - अद्वैत,अखंड, सनातन। जो भक्त होगा वो अपने परिवेश में रम जाएगा। वह रमता राम है। क्योंकि मैं अर्थ को व्यक्त करता शब्द हूँ और शब्द में निहित अर्थ हूँ। वह ही मैं हूँ। और हाँ, मैं ऐसा अनुभव करने और ऐसा जीवन बसर कर पाने में समर्थ हूँ।

इसीलिए माँ बाप ने बचपन में मेरा नाम कुछ भी दिया हो, मैं रमता जोगी ही हूँ और बहता पानी भी हूँ। जोगी का अर्थ है योगी जिसका अर्थ होता है युक्त होना अर्थात अद्वैत होना यानी नित्य वर्तमान। तो यह रहा मेरे नाम का अर्थ और यह स्पष्टीकरण कि क्यों हम भारतीय मूर्तिपूजा करते हैं और पहाड़ों,पत्थरों,जंगलों को पूजते हैं ? पर्यावरण की समझ और उसकी चिंता तो यूरोपीय और बाकी पश्चिमी सभ्यताएं अभी अभी करना शुरू ही हुई हैं। हम तो अनंत काल से यह करते आ रहे हैं। तो वैज्ञानिक और मर्मदर्शी कौन हुआ ? हम लोग या आप लोग? और हम तो यह - आप और हम का - भेद भी नहीं करते। हम तो आपको भी अपनाते हैं यह कह के कि ये सब सीखने की सीढ़ियां हैं। एक दिन आप भी इस सम्पूर्ण दृष्टि को हासिल कर के लघु दृष्टि को समाप्त करेंगें। तो हम किसी की इसी कारण अनावश्यक आलोचना नहीं करते, न उपहास उड़ाते हैं, क्योंकि हम जानते हैं कि अंततोगत्वा, सभी एक दिन, इसी दृष्टि को प्राप्त करेंगें।"

उस अवाक् और हतप्रभ अंग्रेज को वहीँ छोड़ कर रमता जोगी और चिपकु लाल सीढ़ियों से नीचे उतर कर नदी में प्रवेश कर गये। उनको वहां नहाते देख वह अंग्रेज धीमे से खुद से ही बोल पड़ा, "पवित्र ! वह पवित्र नदी में स्नान कर रहे हैं। यही क्यों सभी नदियां पवित्र हैं क्योंकि वे प्रवाह की प्रतिरूप हैं। उनके शरीरों की मैल तो बह जा ही रही होगी जो कि एक निश्चित रुप से पवित्र करने की प्रक्रिया है। पर नदी के प्रवाह का संपर्क अपने आप में एक दिव्य सन्देश है - बहो। आगे बढ़ो। रुको नहीं कहीं। प्रवाह ही ज़िन्दगी है। हे भगवान् ! आज मेरी आँखें खुल गयीं। मैं भी पवित्र हो गया।"

रमता जोगी ने वहीँ से चिल्ला के कहा, "तुम पवित्र इसलिए हुए क्योंकि तुम अपने पूर्वाग्रहों, अपने संग्रहित किये हुए, सदियों से ढोये हुए संस्कारों और कठोर विचारों पर अड़े नहीं। इसीलिए तुम भ्रम के भंवर में पड़े नहीं। तुमने नवीन का स्वागत किया इसीलिए तुम तमस

से निकले और लड़े नहीं। पवित्रता की खीर तभी डाली जाती है जब मन के बर्तन मांज दिए गए हों और उनमें कोई भी अवशिष्ट पुराना न हो, कोई बचा खुचा कल का खाना न हो।"

फिर वे दोनों नदी में ही उछल उछल के, मस्ती में नहाने लगे और गाने लगे -

आओ चलें ,आओ चलें
नदी के प्रवाह में नहाओ,चलें

जल्दबाज़ी के निष्कर्ष हीअवरोध हैं
मोह ईर्ष्या द्वेष भय और क्रोध हैं

मन घड़ंत मान्यताएं और अंधे विश्वास हैं
आएगा न तैरना तब तक नौका ही निवास है

कंधे पर लाद लाये हो सदियों पुरानी पोटलियां
नित्य धारा के वेग में इन्हें बहाओ, चलें

आओ चलें ,आओ चलें
आओ चलें ,आओ चलें।

शिकंजी

चिपकु लाल और रमता जोगी एक रेस्टोरेंट में शिकंजी पी रहे थे। कांच के ग्लासों में शिकंजी भरी थी और शिकंजी के ऊपरी सतह पर बर्फ के कुछ टुकड़े और पोदीना की पत्तियां तैर रहीं थीं। एक चम्मच से इस शरबत को खूब अच्छी तरह मिक्स कर दिया गया था जिस कारण बर्फ के कुछ क्यूब्स गोल गोल घूमे जा रहे थे।

उन्हें देखते हुए चिपकू अचानक बेसाख्ता बोल पड़ा, “जोगी जी, मैं भी तो बर्फ के इन गोलों की तरह बस घूमे ही जा रहा हूँ। निरुद्देश्य, बिना जीवन का मर्म जाने। मैं कौन हूँ ? मुझे क्या करना है ? मुझे कुछ नहीं पता। मेरी परेशानी दूर करें प्रभु।”

रमता जोगी ने एक लम्बा घूंट शिकंजी का लिया और कहा, “बर्फ के क्यूब्स ठोस हैं क्योंकि उनके परमाणु आपस में चिपके हैं ,मोह ग्रस्त हैं। ठोस पन है ही मोह जो हमें आज़ादी से कुछ करने ही नहीं देता। यह देखो बस गोले घूमे ही जा रहे हैं। जो घूमता है, भटकता है, उसे कोई किनारा भी चाहिए, कोई सहारा भी चाहिए। तुम चिपकु हो। तुम इन बर्फीले गोलों की तरह हो। भटक रहे हो। घूमते घूमते कहीं कहीं, प्रश्नों में फंस के अटक भी जाते हो। मैं तो रमता जोगी हूँ जो कि बहता पानी होता है, बहते पानी की तरह सदा प्रवाह में रहता हूँ ।

तुम क्या मुझसे अलग हो ? बर्फ पानी से अलग है ही कहाँ ? ठोसपन छोड़ दो , मोह की जकड़न तोड़ दो , तो तत्वमसि। वही तुम हो। पानी ही तुम हो। तुम और मैं अभिन्न हैं तब। तुम अलग थे ही कब ? और पानी होते ही ,जो तुम पहले से ही थे, तुम इस जगत रूपी शिकंजी के गिलास में गोल गोल नहीं घूमोगे, किनारा नहीं ढूंढोगे क्योंकि शिकंजी तो सर्वत्र है ,पूरे गिलास में है। यही नहीं गिलास के बाहर भी है। वह देखो दूकानदार ने एक बड़े से पतीले में, शिकंजी का घोल, पहले से ही रखा हुआ है।

तुम मुझसे चिपके हुए हो ,सदा मेरे साथ भ्रमण करते हो। तुम मेरा व्यक्त रूप हो। यह दृश्य जगत मोह का ही संसार है ,मोह से ही उद्भूत और संरक्षित रहता है। लेकिन मुक्ति का मार्ग इसी में से हो के है। बर्फ यदि अपना संकीर्ण ठोस स्वरूप पिघला सके तो वह पानी से अद्वैत, अभिन्न, एकसार हो जाए। फिर वह भी बहता पानी है, वह भी रमता जोगी है।”

रमता जोगी और चिपकु लाल शिकंजी पी चुके थे। उन्होंने खाली ग्लासों को मेज़ पर रख दिया और आगे के सफर के लिए आगे बढ़ गए। अब शिकंजी और बर्फ के टुकड़े दोनों के उदर में जा के अभेद हो चुके थे। अब वहां कोई विभेदनकारी द्वैत दृष्टि वाली बर्फ न थी। बस एक, एकसार, एकता थी।

सड़क के किनारे चलते चलते अचानक रमता जोगी रुक गया। उसके हाथ आकाश की ओर उठ गए और वह ज़मीं पर झुक गया। रोज़ाना की मस्ती भरे गीतों की चुलबुलाहटें, आज प्रखर थी, गहरी थीं । चेतना की स्पंदित तरंगें किसी के दर्शनार्थ ठहरीं थीं। जोगी की नज़रें कहीं दूर महाशून्य में थीं और एक विचित्र नशे में थीं। आज उसके मुख से कोई अति प्राचीन शब्द प्रवाह बहने वाला था। आज जोगी एक अलग ही मूड में था।वह कुछ ख़ास बात एक अलग ही अंदाज़ में कहने वाला था।

उसने हौले हौले गुनगुनाना शुरु किया -

फेंक पुरानी पोटलियां
चेत मन मोरे बावरे
न कोई घर न गलियां
न कोई तेरा गाँव रे

मौन - मुरली की धुन में खो जा
जो कुछ देख वही तू हो जा
छनके विचार - पायलिया
रोक अपने पाँव रे

नाचती छायाओं का है जग मेला
पानी में घुलता बर्फ का ढेला
निराकार में खिलती कलियाँ
मृग - तृष्णा का भटकाव रे

इतना गा के रमता जोगी शांत हो गया और एक गहरी समाधि जैसी अवस्था में खो गया। चिपकु लाल उठ खड़ा हुआ। उसे जोगी को इस माया जगत में वापिस लाना था। इसीलिए आगे का गीत उसे ही गाना था। चिपकु लाल ने गुनगुनाया -

पानी में घुलता बर्फ का ढेला
नहीं है यह वन - वे का रेला
यह तो सृष्टि चक्र है अलबेला
अदला बदली का चिर खेला

उच्च आयाम बुला रहे हैं तो भी
जिन्हें नहीं पता है उन्हें बताना होगा
हमारा काम अभी शेष है, उसे
पूरा कर के ही हमें जाना होगा

उत्सुक हैं जो श्रेष्ठ पथ चुनने को
इस अद्भुत गीत को सुनने को
आवाज़ दे उन्हें तो बुलाओ,चलें
आओ चलें ,आओ चलें।

चिपकु लाल ने गज़ब कर दिया। उस की इन पंक्तियों ने जोगी को महाशून्य समाधि की अवस्था से नीचे ला के, अपने शेष बच रहे जन - जागरण के महत कार्य के निष्पादन के लिए, सजग कर दिया।

काफी देर एक पेड़ के नीचे सुस्ताने के बाद रमता जोगी ने चिपकु लाल से कहा, "सुनो चिपकु जी, कोई महान से महान व्यक्ति ही क्यों न हो, लोगों ने सदियों से उनकी परीक्षाएं ली हैं। लेनी भी चाहिये। परीक्षा का उद्देश्य सिर्फ यह है कि लोग आश्वस्त होना चाहते हैं कि यह व्यक्ति जो कह रहा है वह क्या स्वयं भी उनका अनुपालन करता भी है या नहीं ? अब आएगा मज़ा ! एक शास्त्रों का मर्मज्ञ विद्धान हमारे इस बाहरी रूप से बड़ा त्रस्त है। हमारा

सदा तरह तरह के व्यंजन खाना और भांति भांति के पेय पीना और इन्द्रियों द्वारा प्रदत्त सभी भोगों को स्वीकार करना उसे हज़म नहीं हो पा रहा है। उसे यह नहीं पता, पता होगा भी कैसे ? कि यहाँ तो उपभोक्ता है ही नहीं कोई। बस भोग रहे हैं हम। लेकिन कोई भोग करने वाली सत्ता यहाँ है ही नहीं। यहाँ तो एक विराट शून्य है। बस।

चलो, उसकी भी आँखें खोलते हैं। मौन भंग कर कुछ बोलते हैं। वो, सामने एक हलवाई दिख रहा है। जो कढ़ाई से गर्मागर्म जलेबियाँ निकाल रहा है। वहीं चलते हैं। वह महापंडित उस दुकान के पीछे बिजली के ट्रांसफार्मर के पीछे छिपा है और हम पर दृष्टि गढ़ाए है। आओ उसको हम अपने पर फंदा कसने देते हैं। खुद को, उसके ही जाल में फंसने देते हैं। इन्द्रियों के भंवर में खुद को घुमाते हैं। उसके समक्ष अपनी चोरी पकड़वाते हैं। चुपके से जलेबियाँ खाते हैं।"

इन शब्दों के साथ दोनों उस हलवाई की दुकान की ओर बढ़ गए। जल्दी जल्दी, इधर उधर देखते, चुपके से, रेस्टोरेंट की सीढ़ियां चढ़ गए।

जलेबी गर्मागर्म

हलवाई गर्मागर्म जलेबियाँ छान रहा था। अभी अभी उसने लोहे की एक बड़ी सी काली छननी से उन्हें उठा के चासनी से भरी दूसरी कढ़ाई में डालना शुरू ही किया था। तभी रमता जोगी और चिपकु लाल वहीं आ धमके। उन्हें देख के हलवाई का हाथ थम सा गया था, जहाँ का तहाँ रुका था। जलेबियाँ चासनी में नीचे डूब चुकी थीं। उनका रंग गहरा पीला और कुछ कुछ भूरा, जिसे हम गोल्डन ब्राउन कह सकते हैं, हो चुका था।

कुछ पलों के भीतर ही ये दोनों पत्तलों पर गर्मागर्म जलेबियाँ रखे उन्हें खा रहे थे। रसीली, स्टीमिंग हॉट, पतली पतली, नाज़ुक जलेबियाँ !

जलेबी के एक गोल चक्र को मुंह में डालते हुए, उसका रस नीचे न टपके, यह ध्यान रखते हुए, उसे सँभालते हुए, रमता जोगी ने चिपकु लाल से कहा, “यम, यम जलेबी। कितनी फरेबी ? कितनी रहस्यमयी है यह जलेबी ? इस पतले से आवरण में समायी कितनी गाढ़ी प्रचुरता, कितनी प्यारी मधुरता ! इतनी गाढ़ी चासनी को यह नाज़ुक जलेबी धारण कैसे कर पाती है ? यह यक्ष प्रश्न है। बताओ चिपकु लाल। हल करो यह पहेली। सुलझाओ यह सवाल।”

इतना कह के रमता जोगी ने तिरछी नज़र से दुकान के बाहर देखा। वह शास्त्रवेत्ता विद्वान,कुछ उत्साहित कुछ परेशान, चुपके से, छिपता - छिपाता, रेस्टोरेंट में प्रवेश कर चुका था और इनकी बगल वाली सीट पर एक अखबार अपने मुंह के आगे फैला के, अपनी समझ से अब वह बिल्कुल अदृश्य था।

चिपकु ने, जो गर्मागर्म जलेबी का एक टुकड़ा मुंह में डाल चुका था और उसकी जीभ लगभग जल रही थी, उस छिपी हुए जिज्ञासु आत्मा को देखते हुए बोला, “प्रभु, आप ही इसका रहस्योद्घाटन कीजिए। स्वाद के तीव्र विस्फोटों और आनंद के हिलोरों से, ये जलेबियाँ मेरे मन को पागल कर रही हैं, मेरी तो बुद्धि काम ही नहीं कर रही है। आंधी में क्या कुछ दिखाई पड़ता है ? आत्म - मुग्धता के प्रबल संगीत में क्या कुछ सुनाई पड़ सकता है जोगी जी ?

आप ही इसका उत्तर दें मुझे तो कुछ सूझता ही नहीं। क्योंकि आपके हृदय में स्थित बोध का दीपक तो सब तरह की भावनात्मक और ऐन्द्रिय झंझावातों को सहन कर सकता है और बुझता भी नहीं।”

रमता जोगी ने जोर का ठहाका लगाया और कहा, “ तुम्हारा जैसा नाम है ,काम भी तुम्हारा वैसा ही है। चिपकु ! क्यों इन्द्रियों की सूचनाओं और भावनाओं की प्रचंड हवाओं में खुद को उड़ने देते हो ? भोग करो, ज़रूर करो। लेकिन भोग योग से करो। फिर वह भोग भी योग ही बन जाता है जैसे एक तालाब सागर में मिल के सागर ही बन जाता है। तो भोग करो लेकिन “भोगी” हुए बिना, कर्त्तापन के अभिमान के बिना,अपनी पसंद नापसंद यानी किसी भी रुझान के बिना, डुबो इन्द्रियों द्वारा प्रस्तुत स्वाद या सुखानुभूतियों की भीड़ में। लेकिन किसी भी पहचान के बिना।”

यह कहते कहते रमता जोगी ने पत्तल से आखिरी जलेबी भी मुंह में डाल ली। फिर रेस्टोरेंट के एक तरफ लगे हुए नल से हाथ धो कर उन्हें अपने चोगे से पोंछते हुए यह कहा, “ ईशावास्योपनिषद का प्रथम श्लोक ही कहता है - “तेन त्यक्तेन भुंजीथा” - यानी उनका (उपभोग की वस्तुओं का) भोग करो। भुंजीथा का अर्थ ही है भोग करो। लेकिन - तेन त्यक्तेन - अर्थात उनसे प्रभावित हुए बिना ,उनसे चिपके बिना। जैसे तुम नहीं कर पा रहे हो क्योंकि तुम नाम और कर्म दोनों से ही चिपकु हो।”

चिपकु लाल ने भी अपने हाथ नल से धो के साफ़ किये। फिर वह रमता जोगी की आगे की विवेचना सुनने के लिए तत्पर हो गया। रमता जोगी ने कहा, “देखो तुमने अभी अभी जलेबियों का उपभोग किया है लेकिन हाथ नल से धो के उस उपभोग के अंतिम अवशेष को भी मिटा दिया। कैसे ? नल के बहते पानी से।

प्रवाह का मतलब है - आगे बढ़ना किसी अतीत से, किसी पल से, जो गुजर गया है, उससे मुक्त होना, उसकी कॉन्टिनुइटी न होने देना। यही तो है - हमारा मूल मन्त्र। आओ चलें, आओ चलें। भोग करो और आगे बढ़ जाओ। हानि कुछ नहीं है इसमें। लेकिन उसकी स्मृति बना के मन में संचित करना और फिर उसी स्मृति के बीजों को पल्ल्वित करना - सारी समस्याओं की जड़ है।

ज्यादा नुकसान मानसिक गलियों में भोगों के चिंतन और प्रयासों से होता है न कि वास्तविक भोग से। भोग तो बादल जैसे हैं। आये और गए। लेकिन यदि आकाश जा चुके बादलों का चिंतन करे, या नए बादलों की प्रतीक्षा करे, तो यह गलत है, और आकाश यह करता भी नहीं।"

तभी हड़बड़ाहट में कोई किसी चीज़ से टकराया। विद्वान ने अखबार परे फेंक, नीचे अभी अभी गिरे, एल्युमीनियम के पानी के ग्लास को उठाया और रमता जोगी को प्रणाम करते हुए बोला, "मैं बहुत दिनों से आपका पीछा कर रहा हूँ और छिप के ही, अब तक के सारे वार्तालाप, जो आप दोनों के बीच हुए हैं, उन्हें मैं सुनता आया हूँ। भोगों को भोगने के उचित प्रकार और उन से अप्रभावित होने का, जो उद्घाटन अभी अभी आपने किया है, उसने तो मेरी आँखें ही खोल दी हैं।

मैं तो आप दोनों के बारे में बड़ी ही गलत धारणाएं बना चुका था। आप दोनों सदा किसी न किसी रेस्टोरेंट में या कहीं और कुछ न कुछ खाते, मौज़ करते, ही दीखते थे। इसीलिए मैं तो आपको ढोंगी बाबा मान चुका था। लेकिन आज तो मुझे सब स्पष्ट हो चुका है। ऐसा मत किया करें महाराज ! मैं तो आपको जान गया लेकिन लोग धोखा खा जायेंगे और आपको फेक बाबा या फेकू बाबा ही मान लेंगे।"

इतना कह कर वह वेदज्ञाता अपने साधना केंद्र की ओर बढ़ गया जहाँ उसे उन्हीं पुराने कर्मकांडों और केंद्र के सख्त नियमावलियों का पालन करना था। लेकिन उसके मन के किसी गहरे कोने में कुछ, कहीं, सदा के लिए, बदल चुका था।

चिपकु लाल ने अधीर हो के कहा, "अरे ! हमारा मुख्य प्रश्न तो रह ही गया। इतनी नाजुक जलेबी, गाढ़ी चासनी, खुद में कैसे भर लेती है ?"

रमता जोगी ने हँसते हुए कहा, " ध्यान द्वारा !"

फिर गंभीर होते हुए यह कहा, "तुमने देखा ही होगा कि ठंडी जलेबियाँ नहीं सिर्फ तेज़ गर्म, तली हुई, जलेबियाँ ही चासनी में डुबोई जाती हैं। इसी में सारा रहस्य छुपा है।

किसी भी वस्तु के अवशोषण हेतु ,चाहे वो द्रव रूप में हो या किसी उच्च अंतर्दृष्टि के रूप में हो, ग्राही स्त्रोत को गर्म अवस्था में होना ही होता है अन्यथा अवशोषण सुचारु रूप से होता ही नहीं। जलेबी गर्म होगी तभी चासनी को अपनी ओर खींच पायेगी, सोख पाएगी।

इसी प्रकार एक ध्यानी जब ध्यान की गहराई में होगा, तभी वह ज्ञान की सूक्ष्म तरंगों को ग्रहण कर पायेगा। क्या आप नहीं जानते कि ध्यान को तप भी कहते हैं - मानसिक तप - और तप का अर्थ ही है ताप यानी गर्म अवस्था। ईश्वर अनुभूति बिना इस तपश्चर्या के संभव है क्या ? वेद कह गए हैं - तपसा ब्रह्म विजिज्ञास्व - अर्थात तप द्वारा परम तत्व को जानो।"

फिर रमता जोगी ने चिपकु लाल से कहा, "यदि तुम सुधर जाओ ,मोह से उबर जाओ, तो तुम भी रमता जोगी ही हो। जो अतीत में अटका नहीं, व्यर्थ की मान्यताओं में भटका नहीं, किसी मृत सिद्धांत या नियम से लटका नहीं, जिसने क्षुद्र स्वार्थ के कम्पनों वाले "मैं" रूपी हलाहल को गटका नहीं, वह तो स्वयं नित नवीन प्रवाह है। और जो ऐसा बहता पानी है, वह ही परम ज्ञानी है। वह भोग करते हुए भी योगी है। वही तो रमता जोगी है।

बहुत कर लिया इस शोरगुल में भ्रमण, इस द्वैत से आंदोलित दुनिया में रमण। अब आराम की ओर चलो। तुम हो चुके हो अब काबिल, उस परम धाम की ओर चलो। मेरे साथ अभिन्न हो के, उस नए -नित नए, आयाम की ओर चलो। "

यह सुनते ही चिपकु लाल के शरीर के परमाणु तीव्र कम्पनों के साथ छिन्न भिन्न होते हुए रमता जोगी के शरीर से अभिन्न हो गए। अब वहां कोई द्वैत न था। रमता जोगी भी परमाणुओं के गुबार के रूप में, अदृश्य हो के, हवा के साथ साथ बहने लगा। हवा फर्र फर्र बह रही थी और सड़क पर और तंग गलियों में पड़े सूखे पत्तों और अतीत के कूड़े को अपने साथ उड़ा रही थी। सब दिशाओं में एक ही गीत गूंज रहा था - आओ चलें, आओ चलें।

हवा के बहने से पेड़ झूम रहे थे ,आकाश में बादल मस्ती में घूम रहे थे। हवा के बहने से लहरों के कारवां, किसी सोच में लिप्त, सागर तट के बालू कणों को, चूम रहे थे। चाँद गा रहा था, सूर्य गा रहा था, तारे गा रहे थे, सृष्टि के परमाणु सारे, गा रहे थे। क्या गा रहे थे ?

सब ये गा रहे थे -

आओ चलें ,आओ चलें

मिल के सब गाओ चलें

दबी हो कमर जब बोझ तले
हृदय चुनौतियों से हों दलें

रुके हों विचारों के काफ़िले
और मन का रथ चलाये न चले

तो अपना के मस्ताना अंदाज़
सुन अंतरात्मा की आवाज़

छोड़ पीछे तंग अलफ़ाज़
छेड़ें दिल के नाज़ुक साज़

आओ चलें,आओ चलें
आओ चलें ,आओ चलें।

उपसंहार

रमता जोगी और चिपकु लाल अब कहाँ हैं ? वे अदृश्य हो गए। तो हम अब उन्हें कहाँ ढूंढेंगे? उन्होंने सारे भारतीय दर्शन और वेदों के प्रैक्टिकल ज्ञान को सरल कर के - आओ चलें - के गीत द्वारा सब तक पहुँचाया, अब आगे क्या होगा ? हम और ज्ञान कैसे प्राप्त करेंगे ? तो इसका उत्तर यह है।

जब भी हम कहीं अटकें हों, किसी समस्या में भटके हों, तो जब हमें अचानक कभी अपने दिमाग में, बिजली सी कौंधती हुए लगे, जब हमारी बोध शक्ति जगे, समस्या सुलझती हुई लगे, तो हमें यह रहस्य की बात समझनी होगी कि यहीं कहीं उपस्थित है रमता जोगी। क्योंकि कोई भी रुकी हुई चीज़, कोई भी किंकर्तव्यविमूढ़ मन जब फिर से प्रवाह में आ जाए, भ्रमजाल से निकल के बोध द्वारा सही राह में आ जाए, तो मानना ही पड़ेगा कि हमारा रोम रोम गा रहा है - आओ चलें। प्रवाह है तो रमता जोगी है। क्योंकि कहावत भी है - रमता जोगी, बहता पानी।

अच्छा तो, चिपकु लाल कहाँ है ? वह हर जगह है। जहाँ मोह है वहां चिपकने की क्रिया है। परम ज्ञान की अवस्था में, पूर्ण प्रवाह में, चिपकु का अस्तित्व ही नहीं रह सकता। उसे परम अनंत सच्चिदानंद में मिलना ही होगा जैसे प्रवाह के संपर्क में आते ही ठोस, अकड़ू, छोटे छोटे कंकड़ बह जाने और प्रवाह का ही अभिन्न अंग बन जाने को विवश हो जाते हैं।

हम सब चिपकु लाल हैं। ध्यान की अवस्था रमता जोगी है। हम उसके संग हैं, तो मस्त हैं, मलंग हैं। हमारे जीवन में खुशियां हैं, रंग है, संगीत की तरंग है। अन्यथा हमारा पूरा जीवन ही बेढब और बेढंग है।